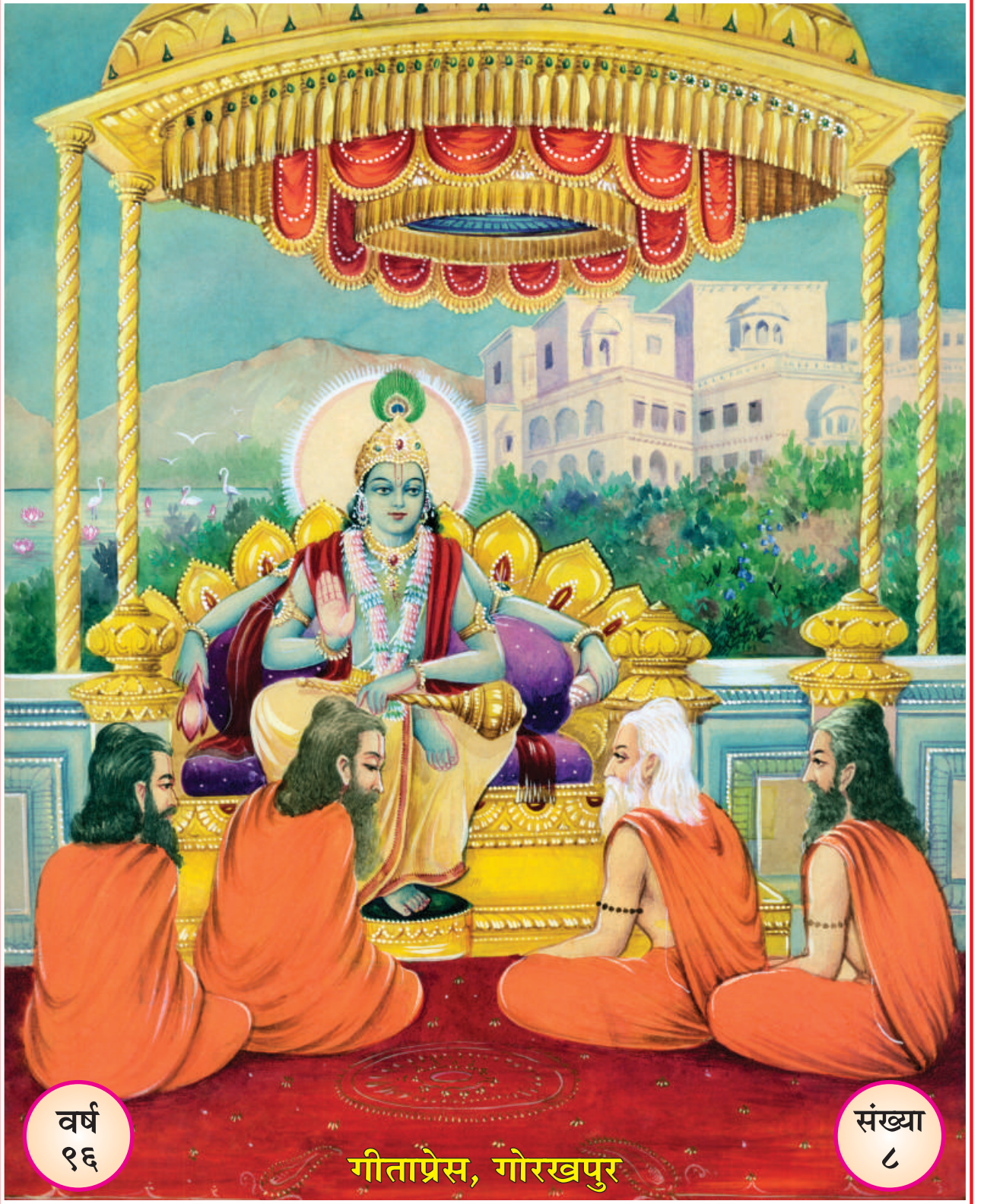


* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
१६

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
८

श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान



COLLECTION OF VARIOUS
-> **HINDUISM SCRIPTURES**
-> **HINDU COMICS**
-> **AYURVEDA**
-> **MAGZINES**

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

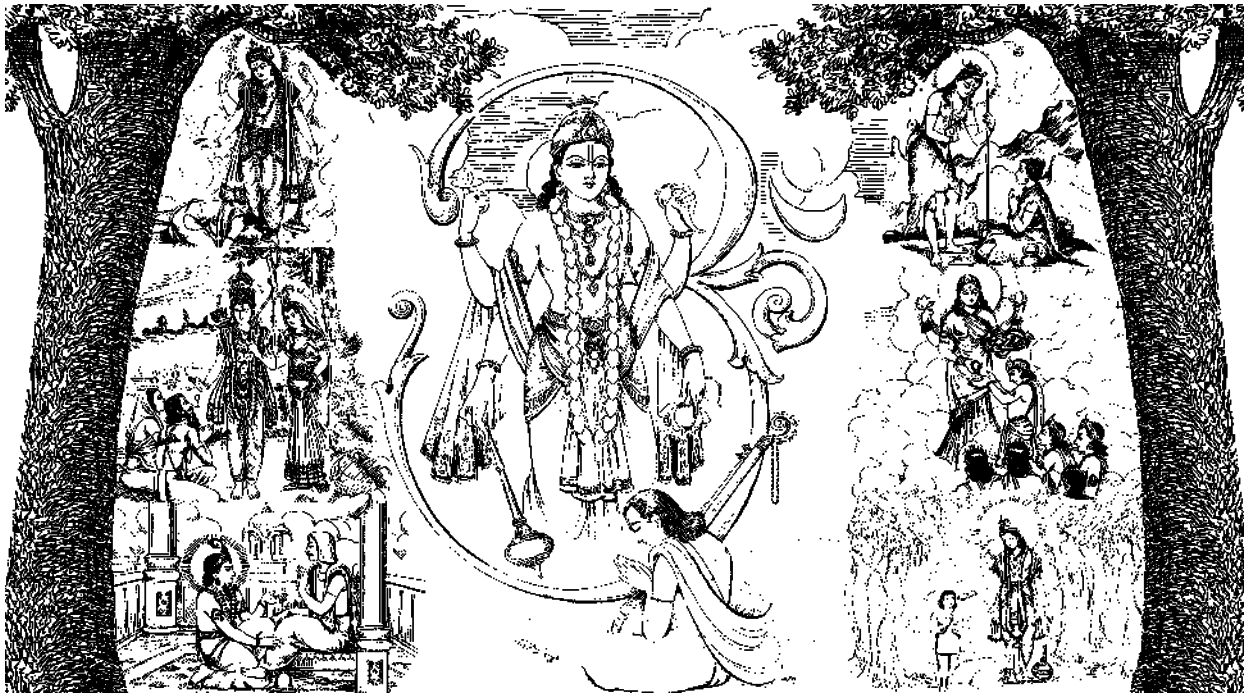
By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



शिवध्यानरत भगवती पार्वती

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपाँ सो दयाल द्रवउ सकल कलि मल दहन॥

वर्ष
१६

गोरखपुर, सौर भाद्रपद, वि० सं० २०७९, श्रीकृष्ण-सं० ५२४८, अगस्त २०२२ ई०

संख्या
८

पूर्ण संख्या ११४९

भगवान् शंकरकी वररूपमें प्राप्तिहेतु पार्वतीजीकी तपस्या

उर धरि उमा प्रानपति चरना। जाइ बिपिन लागीं तपु करना॥
अति सुकुमार न तनु तप जोगू। पति पद सुमिरि तजेउ सबु भोगू॥
नित नव चरन उपज अनुरागा। बिसरी देह तपहिं मनु लागा॥
संबत सहस मूल फल खाए। सागु खाइ सत बरष गवाँए॥
कछु दिन भोजनु बारि बतासा। किए कठिन कछु दिन उपबासा॥
बेल पाती महि परइ सुखाई। तीनि सहस संबत सोइ खाई॥
पुनि परिहरे सुखानेउ परना। उमहि नामु तब भयउ अपरना॥
देखि उमहि तप खीन सरीरा। ब्रह्मगिरा भै गगन गभीरा॥

भयउ मनोरथ सुफल तव सुनु गिरिराजकुमारि।

परिहरु दुसह कलेस सब अब मिलिहहिं त्रिपुरारि॥

[श्रीरामचरितमानस]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण १,८०,०००)

कल्याण, सौर भाद्रपद, वि० सं० २०७९, श्रीकृष्ण-सं० ५२४८, अगस्त २०२२ ई०, वर्ष ९६—अंक ८

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- भगवान् शंकरकी वररूपमें प्राप्तिहेतु पार्वतीजीकी तपस्या	३	१७- जीवनमें सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे हो ?	
२- सम्पादकीय	५	[प्रेषक—प्रो० श्रीसन्तोष कुमारजी तिवारी]	२८
३- कल्याण	६	१८- जपका रहस्य (श्रीरामलालजी पहाड़ा)	२९
४- भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालिक ध्यान		१९- लंकाकी अधिष्ठात्रीदेवीद्वारा निशाचर-संहारकी भविष्यवाणी	
[आवरणचित्र-परिचय]	७	(श्रीईदल सिंहजी भदौरिया)	३१
५- पिता-पुत्र-सम्बन्धसे भी बढ़कर है धर्म		२०- ज्ञेय साधनाकी रहस्यमयी कुंजी (श्रीरामशास्त्रीजी)	३२
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	८	२१- समरूप रहकर ही क्रोधपर नियन्त्रण (श्रीविजयजी सिंगल) ..	३४
६- उत्तेजनाके क्षणोंमें [हमारे आन्तरिक शत्रु]		२२- कौन-सा मार्ग ग्रहण करें ? (प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र)	३५
(श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	९	२३- सम्पूर्ण जीवन ही ईश्वरकी पूजा बन जाय	
७- लीलामयकी लीलाएँ		(स्वामी श्रीसच्चिदानन्द सरस्वतीजी महाराज)	३६
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	१३	२४- रुद्रेश्वर महादेव [तीर्थ-दर्शन] (श्रीप्रदीपकुमारजी)	३८
८- स्थानका मनपर प्रभाव		२५- गृहस्थ सन्त परम भागवत पण्डित मिहीलालजी	
(गोलोकवासी सन्त श्रीकेशवराजमन्द्र डोंगरेजी महाराज)	१५	(श्रीराजकमलजी मिश्रा)	३९
९- भक्तिपथके पाँच बड़े काँटे	१६	२६- अनजाने कर्मका फल	४२
१०- तत्त्वज्ञान [साधकोंके प्रति]		२७- भारतीय संस्कृतिकी मूलाधार—गौ (गोरक्षपीठाधीश्वर योगी	
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१७	श्रीआदित्यनाथजी महाराज, मुख्यमन्त्री उत्तरप्रदेश सरकार) ..	४३
११- 'तुलसी कथा रघुनाथ की' [तुलसी-जयन्तीपर विशेष]		२८- गायका दूध बढ़ानेके उपाय	४४
(जयदीप सिंह)	१८	२९- धनोपार्जनका उचित और अनुचित रूप	
१२- सफल राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्ण (श्रीवासुदेवजी शर्मा)	२०	(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	४५
१३- कालापानीसे मृत्यु श्रेयस्कर है [क्रान्ति-गाथा]	२३	३०- सच्चा सेवक बननेका उपाय	४५
१४- सात्त्विक वृत्ति (श्रीसुरेशचन्द्रजी)	२४	३१- कृपानुभूति	४६
१५- शिव-स्तुति (श्रीब्रह्मबोधजी)	२५	३२- पढ़ो, समझो और करो	४७
१६- नागपंचमी-व्रत-माहात्म्य	२६	३३- मनन करने योग्य	५०

चित्र-सूची

१- श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान	(रंगीन)	आवरण-पृष्ठ	
२- शिवध्यानरत भगवती पार्वती	(")	मुख-पृष्ठ	
३- श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान	(इकरंगा)	७	
४- कृष्णको डाँटती माता यशोदा	(")	१३	
५- विषपान करते भगवान् शंकर	(")	१४	
६- सुन्द-उपसुन्दको वर देते ब्रह्माजी ..	(")	१५	
७- परस्पर युद्धरत सुन्द-उपसुन्द	(इकरंगा)	१६	
८- शंकर-पार्वती-संवाद	(")	१८	
९- रुद्रेश्वर महादेव	(")	३८	
१०- गृहस्थ सन्त पं० मिहीलालजी	(")	३९	
११- धर्मराजका दूतोंको			
समझाना	(")	४२	

एकवर्षीय शुल्क ₹ 500 सभी अंक रजिस्ट्रीसे	जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥ जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥ जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥	पंचवर्षीय शुल्क ₹ 2500 सभी अंक रजिस्ट्रीसे
एकवर्षीय शुल्क ₹ 300 मासिक अंक साधारण डाकसे	विदेशमें Air Mail } शुल्क } वार्षिक US\$ 50 (^ 4,000) पंचवर्षीय US\$ 250 (^ 20,000)	पंचवर्षीय शुल्क ₹ 1500 मासिक अंक साधारण डाकसे
	Us Cheque Collection Charges \$ 6 Extra	

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका
आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
सम्पादक—प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोविन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

९ 09235400242 / 244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—273005, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता हेतु gitapress.org पर Kalyan या Kalyan Subscription option पर click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क gitapress.org अथवा book.gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

॥ श्रीहरिः ॥

साधकोंके जीवनमें सजगता और सतर्कता बहुत जरूरी है। यदि अपना मार्ग भगवद्भक्ति और समर्पणका है, तो हमें बार-बार यह जाँच करते रहना चाहिये कि दिनभर जो भी कार्य हमारे शरीर-मन-बुद्धिसे हो रहे हैं, क्या उन्हें हमने भगवान्की कृपा-करुणासे होता हुआ जाना-समझा है? क्या हमने दीनभावसे उन्हें भगवदर्पण किया है? यदि नहीं, तो भगवान्से अपनी भूलकी क्षमा माँगते हुए साधनमार्गपर दृढ़तासे बढ़ते रहनेकी शक्ति माँगनी चाहिये।

यदि अपना मार्ग ज्ञानका है और स्वयंके सच्चिदानन्द स्वरूपकी झलक मिलनी शुरू हो गयी है, तो इन्द्रियसमूहसे होनेवाले प्रत्येक क्रियाकलापमें निरन्तर द्रष्टाभाव बना रहना आवश्यक है। जो कुछ भी हमारे शरीर-मन-बुद्धिसे हो रहा हो, उसे चैतन्यभावसे निरन्तर देखते रहें कि यह हो रहा है और मैं केवल इसे होता हुआ देख रहा हूँ।

यदि निष्काम-कर्मका साधनमार्ग हमने चुना है, तो हर क्रिया-कलापको स्मरणपूर्वक हमें इस प्रकार करना चाहिये कि उस कामको करते समय हमें याद रहे कि हम भगवान्की दी हुई प्रेरणा और क्रियाशक्तिसे उसे कर रहे हैं और उसके होनेके बाद उसकी सफलता-विफलतासे निर्लिप्त रहकर उस कर्मका फल प्रभुचरणोंमें समर्पित कर दें।

मार्ग कोई हो, चलनेमें सजगता जरूरी है, अन्यथा सावधानी हटी, दुर्घटना घटी। नारायण हरि

—सम्पादक

कल्याण

याद रखो—जगत्में जो कुछ है, सब केवल भगवान्का ही मूर्तरूप है, सभीमें भगवान् विराजमान हैं। केवल मनुष्योंमें ही नहीं—पशु-पक्षी-कीट-पतंग सभीमें और इन चेतन प्राणियोंमें ही नहीं, समस्त जड़ वर्गमें भी भगवान् हैं। श्रीमद्भागवतमें योगीश्वर कविने बतलाया है—

खं वायमग्निं सलिलं महीं च

ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन् ।

सरित्समद्रांश्च हरेः शरीरं

यत् किञ्च भूतं प्रणमेदनन्यः ॥

अर्थात् ‘आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, ग्रह-नक्षत्र, प्राणी, दिशाएँ, वृक्ष, वनस्पति, नदी, समुद्र’—सभी श्रीहरिके शरीर हैं। ऐसा जानकर चराचरमात्रको अनन्य भगवद्भावसे प्रणाम करे। अतएव सबमें भगवान् समझकर सबकी अपने कर्मके द्वारा सेवा करो, सबको यथासाध्य सुख पहुँचाओ और सबका हित-साधन करो।

याद रखो—जो दूसरे प्राणियोंका अहित करता है, वह मानो भगवान्‌का ही अहित करता है। इसलिये कभी किसीका भी अहित न तो करो, न चाहो। यह समझो कि तुम्हारे पास जो कुछ भी साधन-सामग्री है, सभी जगत्-रूप भगवान्‌की सेवाके लिये ही है। अपनेको अनन्य सेवक मानो।

याद रखो—संसारमें सात प्रकारके मनुष्य हैं—
सबसे श्रेष्ठ वे हैं, जो अपनी हानि करके भी दूसरोंको
लाभ पहुँचाते हैं। दूसरे वे हैं, जो अपनी हानि न करके
दूसरोंको लाभ पहुँचाते हैं। तीसरे वे हैं, जो अपने
लाभके लिये ही प्रयत्नवान् रहते हैं, दूसरोंकी चिन्ता
नहीं करते। चौथे वे हैं, जो अपने लाभमें दूसरोंकी हानि
होती देखते हैं तो उसे सह लेते हैं, कोई परवा नहीं
करते। पाँचवें वे हैं, जो दूसरोंकी हानि होती हो और
उसमें अपना लाभ दीखता हो तो दूसरोंको हानि पहुँचा
Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharm>

देते हैं। छूटे वे हैं, जो जान-बूझकर सदा दूसरोंकी हानि ही करते हैं और उसीमें अपना लाभ मानते हैं और सातवें सबसे नीच मनुष्य वे हैं, जो अपनी हानि करके भी दूसरोंको हानि पहुँचाना चाहते हैं।

याद रखो—दूसरोंकी हानिमें जो अपना लाभ मानता है अथवा दूसरोंके लाभमें जो अपनी हानि मानता है, वे दोनों ही भूले हुए हैं। जिससे दूसरोंको लाभ होगा, उसमें तुम्हारी हानि होगी ही नहीं और जिससे दूसरोंकी हानि होगी, उसमें तुम्हारा लाभ होगा ही नहीं।

याद रखो—जो मनुष्य दूसरेकी हानिमें अपना लाभ मानता है, वह बड़ा ही अभागा है; क्योंकि उसका जीवन पाप-जीवन बन जाता है और जो दूसरेके लाभमें ही अपना लाभ मानता है और सदा दूसरेके हितसाधनमें लगा रहता है, वह बड़ा सौभाग्यवान् है, उसपर भगवान्की बड़ी कृपा है।

याद रखो—जो सब जीवोंमें भगवान्‌को देखते हैं, उनके द्वारा तो ऐसा कोई काम कभी होगा ही नहीं, जिससे किसीको हानि पहुँचे या किसीका अहित हो। वे तो नित्य-निरन्तर अपने प्रत्येक कर्मके द्वारा भगवान्‌की पूजा ही करते हैं।

याद रखो—जब प्राणिमात्रमें भगवद्भाव निश्चित हो जाता है, तब सर्वत्र भगवान्की झाँकी होने लगती है और समस्त क्रियाओंमें भगवान्की लीलाके दर्शन होने लगते हैं।

याद रखो—जब तुम्हारा सर्वत्र सबमें भगवद्भाव हो जायगा, तब तुम्हारे लिये कोई भी पराया नहीं रह जायगा। इस अवस्थामें क्षुद्र स्वार्थवश होनेवाले वैर-विरोध, कामना-वासना, राग-द्वेष आदि दोषोंका सर्वथा अभाव हो जायगा, जीवन त्यागमय होगा और हृदयमें प्रेम, आनन्द और शान्तिकी निर्मल सरिता बहने लगेगी।

‘शिवू’

आवरणचित्र-परिचय—

भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालिक ध्यान



प्रस्तुत चित्रमें भगवान् श्रीकृष्णके सायंकालीन ध्यानके स्वरूपको चित्रित किया गया है। सायंकालमें भगवान् श्रीकृष्ण द्वारकापुरीमें एक सुन्दर भवनके भीतर विराजमान हैं, जो विचित्र उद्यानसे सुशोभित है। वह श्रेष्ठ भवन आठ हजार गृहोंसे अलंकृत है। उसके चारों ओर निर्मल जलवाले सरोवर सुशोभित हैं। हंस, सारस आदि पक्षियोंसे व्याप्त उन सरोवरोंकी कमल और उत्पल आदि पुष्प शोभा बढ़ाते हैं। उक्त भवनमें एक शोभासम्पन्न मणिमय मण्डप है, जो उदयकालीन सूर्यदेवके समान अरुण प्रकाशसे प्रकाशित हो रहा है। उस मण्डपके भीतर सुवर्णमय कमलकी आकृतिका सुन्दर सिंहासन

हैं, जिसपर त्रिभुवनमोहन श्रीकृष्ण बैठे हैं। उनसे आत्मतत्त्वका निर्णय करानेके लिये मुनियोंके समुदायने उन्हें सब ओरसे घेर रखा है। भगवान् श्यामसुन्दर उन मुनियोंको अपने अविनाशी परम धामका उपदेश दे रहे हैं। उनकी अंगकान्ति विकसित नीलकमलके समान श्याम है। दोनों नेत्र प्रफुल्ल कमलदलके समान विशाल हैं। सिरपर स्निग्ध अलकावलियोंसे संयुक्त सुन्दर किरीट सुशोभित है। गलेमें वनमाला शोभा पा रही है। प्रसन्न मुखारविन्द मनको मोहे लेता है। कपोलोंपर मकराकृति कुण्डल झलमला रहे हैं। वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है। वहीं कौस्तुभमणि अपनी प्रभा बिखेर रही है। उनका स्वरूप अत्यन्त मनोहर है। उनका वक्षःस्थल केसरके अनुलेपसे सुनहली प्रभा धारण करता है। वे रेशमी पीताम्बर पहने हुए हैं, विभिन्न अंगोंमें हार, बाजूबन्द, कड़े और करधनी आदि आभूषण उन्हें अलंकृत कर रहे हैं। उन्होंने पृथ्वीका भारी भार उतार दिया। उनका हृदय परमानन्दसे परिपूर्ण है तथा उनके चारों हाथ शंख, चक्र, गदा और पद्मसे सुशोभित हैं।*

भक्तोंको इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालीन ध्यान करना चाहिये।

जो प्रतिदिन इस प्रकार सायंकालमें भगवान् वासुदेवका ध्यान करता है, वह सम्पूर्ण कामनाओंको पाकर अन्तमें परम गतिको प्राप्त होता है।

[नारदपुराण, पूर्वभाग अ० ८०]

* सायाह्ने द्वारवत्यां तु चित्रोद्यानोपशोभिते । अष्टसाहस्रसंख्यातैर्भवनैरुपमण्डिते ॥
हंससारससंकीर्णकमलोत्पलशालिभिः । सरोर्भिर्निर्मलाम्भोभिः परीते भवनोत्तमे ॥
उद्यत्प्रद्योतनोद्योतद्युतौ श्रीमणिमण्डपे । हेमाम्भोजासनासीनं कृष्णं त्रैलोक्यमोहनम् ॥
मुनिवृन्दैः परिवृतमात्मतत्त्वविनिर्णये । तेभ्यो मुनिभ्यः स्वं धाम दिशन्तं परमक्षरम् ॥
उन्निन्द्रेन्दीवरश्यामं पद्मपत्रायतेक्षणम् । स्निग्धकुन्तलसम्भिन्नकिरीटवनमालिनम् ॥
चारुप्रसन्नवदनं स्फुरन्मकरकुण्डलम् । श्रीवत्सवक्षसं भ्राजत्कौस्तुभं सुमनोहरम् ॥
काश्मीरकपिशोरस्कं पीतकौशेयवाससम् । हारकेयूरकटकटिसूत्रैरलंकृतम् ॥
हृत्विश्वम्भराभिरिभारं मुदितमानसम् । शङ्खचक्रगदापद्मराजद्भुजचतुष्टयम् ॥

(ना० पूर्व० ८०। ९२-९९)

इस प्रकार यह घटना बताती है कि राजाके लिये पिता-पुत्र-सम्बन्धसे भी बढ़कर धर्मकी मर्यादा है। राजा मरुत सत्त्व और पराक्रमसे युक्त महान् तेजस्वी थे। सातों द्वीपोंमें कहीं भी उनकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं होता था।

मुझे दुर्बल पाकर कोई गाली दे देता है, पीट देता है। मेरा कसर हो तब भी मुझे गुस्सा आता है, फिर बिना

कसूर यदि कोई मार बैठे तो फिर मेरा क्रोधित होना स्वाभाविक ही है।

मतलब, जब मेरे आराममें बाधा पड़ती है, सुखोपभोगमें कोई अड़चन आ जाती है, तो मेरा क्रोध भड़क उठता है। फिर वह गरमीमें उमस होनेसे हो, बाहर जाते समय तालीका गुच्छा खो जानेसे हो, जरूरतके वक्त जरूरी चीजके न मिलनेसे हो, समयपर बर्तन मलनेके लिये दाईके न आनेसे हो, खाना बननेके पहले ही आँच चली जानेसे हो, किसी चीजके खो जानेसे हो, बच्चोंके जिद करनेसे हो, समयपर गाढ़ी मेहनतकी कमाई न मिलनेसे हो, परीक्षामें असफल हो जानेसे हो, बरसातमें पैर फिसलकर गिर जानेसे हो, बीमार पड़ जानेसे हो, समयपर उधार गयी चीज या रकम वापस न मिलनेसे हो अथवा और ही किसी कारणसे हो। मेरे स्वार्थमें मेरे आराममें बाधा आयी नहीं कि मेरा क्रोध उबला!

लेकिन, यही तक बस नहीं। मेरे क्रोधके और भी कितने ही कारण हैं। मुझमें कूट-कूटकर अनेक दुर्गुण भरे पड़े हैं। मगर मैं यह नहीं चाहता कि मेरी कमजोरियोंका कोई पर्दाफाश करे! जब कोई व्यक्ति मेरे आत्मसम्मानको ठेस लगाता है, मेरी ख्यातिपर प्रहार करता है, दूसरोंकी दृष्टिमें मुझे गिरानेकी चेष्टा करता है, मुझे उचितसे कम आदर देता है अथवा किसी भी प्रकारसे मेरे अहंकारपर ठोकर मारता है तो मेरे तावका ठिकाना नहीं रहता!

मेरी पत्नी, मेरे छोटे भाई, बहन, मेरे बच्चे, मेरे अधीनस्थ कर्मचारी जब मेरी बात नहीं सुनते, मेरे आदेशोंका अक्षरशः पालन नहीं करते अथवा मेरी रुचि और इच्छाके विपरीत कोई काम करते हैं, तो मेरा गुस्सा दर्शनीय बन बैठता है!

मेरी झूठी शानमें ठेस लगी नहीं, मेरी कमजोरियोंपर किसीने उँगली उठायी नहीं कि एड़ीसे लेकर चोटीतक मेरा सारा शरीर क्रोधसे जल उठता है।

मेरी झूठी शानमें ठेस लगी नहीं, मेरी कमजोरियोंपर किसीने उँगली उठायी नहीं कि एड़ीसे लेकर चोटीतक मेरा सारा शरीर क्रोधसे जल उठता है।

निन्दा और अपमान होनेपर, उपेक्षा और तिरस्कार होनेपर तो मेरी ही क्या, बड़े-बड़ीका आसिन डाल जाता

है। चिढ़ानेपर, तिरस्कृत होनेपर मेरे क्रोधका पार नहीं रहता। मेरी शारीरिक अयोग्यतापर, मेरी जाति, वर्ण, कुल, विद्या, बुद्धि आदिपर कोई आक्षेप कर भर दे, मुझे चोट लग जानेपर, मेरे गिर जानेपर कोई हँस भर दे, मुसकरा भर दे, मेरा मखौल भर उड़ाये, तब देखिये मेरा लाल होना।

कोई व्यक्ति जब मुझपर व्यंग्य कसता है, मुझपर कार्टून बनाता है, मित्रमण्डलीमें, परिचितोंमें, सभा-सोसाइटीमें, क्लब या गोष्ठीमें निरादर करता है, मजाक उड़ाता है, व्याजसे भी कहीं मेरी निन्दा करता है तो मेरा रोम-रोम क्रोधसे जलने लगता है!

यह मत समझ लीजिये कि सिर्फ इतनी ही बातोंपर मेरा क्रोध भड़कता है। मेरे क्रोधके कारणोंकी सूची बहुत लम्बी है। जैसे—

मेरा कोई साथी अथवा मेरे अधीन काम कर चुकनेवाला कोई व्यक्ति जब धनसम्पत्तिमें, मान-सम्मानमें मुझसे बाजी मार ले जाता है, तो मेरा क्रोध फुफकार उठता है—‘हैं, मैं जहाँ-का-तहाँ पड़ा हूँ और यह मुझसे इतना आगे बढ़ गया!’

मुझे अनिद्राका रोग है, नींद नहीं आती, चिन्ताएँ आठ पहर चौंसठ घड़ी घेरे रहती हैं और कोई दूसरा मेरे सामने ही खरटिकी नींद लेता है, निश्चिन्त जीवन व्यतीत करता है, मौज-मस्तीसे जिन्दगीके दिन काटता है, यह देख मेरे क्रोधका पार नहीं रहता!

मैं भले ही झूठ बोलता रहूँ, ‘अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो’ की नीति अपनाता रहूँ, पर मुझे यह बर्दाश्त नहीं होता कि कोई दूसरा व्यक्ति झूठ बोले अथवा असलियतपर पर्दा डाले!

मैं दुनियाभरकी खुराफातें करता रहूँ, परंतु दूसरेसे कोई सामान्य-सा भी अपराध बन पड़े, तो मैं उसे क्षमा करनेकी बात भी नहीं सोच सकता! ऐसे मौकोंपर मेरा क्रोध देखते ही बनता है!

‘धोबीसे बस न चला तो गदहेके कान उमेठ दिये!’— इस तथ्यका मैंने जो-जानसे पकड़ रखा है। दफ्तरमें बड़े

बाबू जिस दिन मुझपर अपना ताव उतारते हैं, उस दिन मेरी पत्नी और बच्चे उस तावके शिकार न बने तो मैं ही क्या !

व्यंग्य किया, निन्दा की, मेरे खिलाफ कुछ कहा, कुछ किया—बस, क्रोधदेवता हाज़िर !

×

×

×

×

×

×

अपनी बेवकूफियाँ मेरी दृष्टिमें नगण्य रहती हैं, पर दूसरोंकी बेवकूफियोंपर मेरा बिगड़ उठना मेरे लिये स्वाभाविक है।

‘कामात्क्रोधोऽभिजायते!’

कामसे तो क्रोध आता ही है, लोभसे भी क्रोध आत है। मोहसे भी क्रोध भड़कता है।

भले ही मेरा दृष्टिकोण गलत हो, पर वाद-विवादमें कोई मेरे पक्षको चुनौती दे, फिर देखिये मेरा क्रोध !

मद और मात्सर्यसे भी क्रोधका जन्म होता है। कहा नहीं जा सकता कि हमारे अन्तस्का कौन विकार कब क्रोधका रूप धारण कर लेगा।

×

×

×

×

×

×

बच्चे पढ़ाईमें यदि मेरी आशाके अनुरूप प्रगति न करें अथवा व्यवहारमें ठीक वैसा न करें, जैसा बुजुर्गोंको करना चाहिये, फिर देखिये मेरा ताव। मार-मारकर उन्हें उत्तू बनाये बिना मैं मान नहीं सकता !

उत्तेजनाके ये क्षण रात-दिनमें न जाने कितनी बार उपस्थित होते हैं। रोज हम कितने ही लोगोंके सम्पर्कमें आते हैं। सबके स्वार्थ अलग, सबके स्वभाव अलग, सबकी प्रकृति अलग, सबकी रुचि अलग, सबके रुझान अलग।

×

×

×

×

×

×

‘टाकाय टाका बाढ़े !’ किसीको क्रोधित होते देख मैं भी क्रुद्ध हुए बिना नहीं रह सकता। पत्थरका जवाब पत्थरसे देनेमें मैं माहिर हूँ। ईसाका वह पर्वतवाला उपदेश मुझे फूटी आँख नहीं सुहाता कि ‘कोई तुम्हारे दायें गालपर थप्पड़ मारे तो तुम उसके आगे बायाँ गाल भी कर दो !’

और जहाँ किसीने कोई बात मेरी रुचिके प्रतिकूल की कि मुझे क्रोध आया ! मेरी इच्छाके विपरीत कुछ हुआ कि मैं उत्तेजित हुआ !

×

×

×

×

×

×

अमुक व्यक्ति तुम्हारे खिलाफ ऐसा-ऐसा कह रहा था—यह बात कोई मुझसे आकर कह दे, बस, असलियतका कुछ भी पता लगाये बिना मैं क्रोधके हाथका खिलौना बन बैठता हूँ। बातका बतंगड़ बनते देर नहीं लगती।

क्रोध जब आता है तो मेरा चेहरा लाल हो जाता है, भौंहें तन जाती हैं, आँखें लाल हो उठती हैं, नथुने फूल जाते हैं, नाक लाल हो जाती है, साँस तेजीसे चलने लगती है, जुबान बेलगाम हो जाती है, मुट्टियाँ बँध जाती हैं, शरीरका रोम-रोम उत्तेजनासे भर उठता है !

×

×

×

×

×

×

भले ही न्याय और सदाचारसे मैं कोसों दूर रहूँ, पर मेरे सामने कोई अन्याय और दुराचार कर तो जाय ! अपराधीको दण्ड देनेके लिये मैं तत्काल कानूनको अपने हाथमें उठा लेता हूँ !

क्रोधके आते ही मेरी शान्ति हवा हो जाती है, विवेक झग्न मारा करता है, बुद्धिका दिवाला खिसक जाता है, तन-बदनका सारा होश जाता रहता है और उस हालतमें मैं कुछ भी कर सकता हूँ।

×

×

×

×

×

×

तात्पर्य यह कि सुबहसे शामतक और शामसे सुबहतक एक-दो नहीं, कभी-कभी सैकड़ों ऐसे प्रसंग उपस्थित हो जाते हैं, जब मैं उत्तेजित हो उठता हूँ, मेरी शान्ति मेरा पल्ला छुड़ाकर भाग जाती है और मैं क्रोधके हाथोंकी कठपुतली बन बैठता हूँ। जहाँ मेरे स्वार्थमें कोई बाधा पड़ी, जहाँ मेरी इच्छाके प्रतिकूल कुछ हुआ, मेरे आराममें खलल पड़ा, जहाँ कोई काम बिगड़ा, जहाँ कोई चीज खराब हुई, जहाँ किसीने मारा-पीटा, गाली बकी,

क्रोधके आवेशमें मैं गाली बक सकता हूँ, व्यंग्य कस सकता हूँ। स्त्री-बच्चोंपर ही नहीं, दूसरोंपर भी हाथ उठा सकता हूँ, कोई भी कुकृत्य कर सकता हूँ, भले ही बादमें उसके लिये पछताना पड़े।

उत्तेजनाके क्षणोंमें मैं मार-पीट, खून-कत्लतक कर सकता हूँ। और क्या नहीं कर सकता ?

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

क्रोधका परिणाम किसीसे छिपा नहीं। जेलोंकी आबादी आधी भी नहीं रहती, यदि मानव क्रोधपर विजय प्राप्त कर पाता। वहाँ काम, क्रोध और लोभके ही शिकार तो चारों ओर दिखायी पड़ते हैं।

लखनऊ सेण्ट्रल जेलमें ४२ में एक सीधे-सादे कैदीसे जब मैंने पूछा—‘भाई ! तुम क्यों यहाँ चले आये ? तुम तो बहुत सीधे, ईमानदार और शान्त जान पड़ते हो !’ तो वह बहुत शर्माकर बोला—‘क्या बताऊँ भाईजी ! ससुरालमें जोरूकी बिदा कराने गया था। उन लोगोंने उस समय उसे भेजनेसे इनकार किया। मुझे गुस्सा आ गया और मैंने गँड़ासा उठाकर बीबीकी ही गर्दन उड़ा दी ! अब जिन्दगीभर जेल काटनी है !’

$$\times \qquad \qquad \qquad \times \qquad \qquad \qquad \times$$

क्रोध अत्यन्त भयंकर मानसिक विकार है। आज घर-घरमें इतना लड़ाई-झगड़ा, द्वेष, घृणा और झिक्झिक दीख पड़ती है, उसका मूल कारण यह क्रोध ही है।

क्रोध प्रकट होता है तो कटुवाणीमें, तू-तू, मैं-मैं, गाली-गलौजमें, मार-पीट और कत्लमें। दबा रहता है तो घृणा और द्वेषका रूप पकड़ लेता है और मौका मिलते ही ज्वालामुखीकी तरह फट पड़ता है!

बीमारियाँ तो क्रोधसे न जाने कितनी पैदा होती हैं। चिन्ता, स्नायुदौर्बल्य, रक्तचाप, मिरगी, बेहोशी, पागलपन आदि न जाने क्या-क्या हो जाता है क्रोधके कारण ! कहते हैं, क्रोधसे विषाक्त माताका दूध पीनेसे बच्चेकी मृत्युतक होनी सम्भव है।

\checkmark \checkmark \checkmark

व्यक्तिका क्रोध समाजमें फैलता है, समाजका राष्ट्रमें और राष्ट्रका सारे संसारमें। विश्वयुद्धोंका जनक क्रोध ही है। एटम बम, हाइड्रोजन बम आदिके भीतर हमारा यह क्रोध ही तो सिमटा-सिकुड़ा बैठा है। इसके फटनेकी देर है कि मीलोंतक सर्वनाशका ताण्डव होने लगता है।

\times \times \times

जो क्रोध इतना भयंकर है, जो क्रोध आननफानन
लाखका घर खाक कर देता है, जो क्रोध जेल, कालापानी
और फाँसीतक पड़नेके लिये विवश कर देता है, जिस
क्रोधकी परिणति दुःख और हाहाकारमें ही होती है, उसी
क्रोधके विषयमें मैंने लोगोंको कहते सुना है—‘क्रोधके बिना
भी भला संसारका काम चल सकता है?’ वे कहते हैं—

अति सीधे मति होइये, कछुक व्यंग मन माहिं ।

सीधी लकड़ी काटि लें, टेढ़ी काटें नाहिं ॥

स्वामी रामतीर्थने इसका बड़ा सटीक उत्तर दिया है—‘हम यह पूछते हैं कि क्या यह सच है कि ‘टेढ़ी काटें नाहिं?’ सच तो यह है कि समयपर सब कट जाती हैं, क्या सीधी और क्या टेढ़ी। केवल आगे-पीछेका भेद है। कटनेमें सब बराबर हैं।’

‘हाँ, अगर सचमुच अन्तर है तो यह है कि टेढ़ी लकड़ी काटी जाकर प्रायः जलायी जाती है, ईंधनके काम आती है और सीधी लकड़ी काटी जाकर जलायी नहीं जाती, वरं वह रंग-रोगनसे सजकर अमीरों, वृद्धों, महापुरुषों, शौकीनों, सुन्दरियोंके कर-कमलोंका दण्ड (डंडा) बनती है या यदि मोटी और भारी हो तो मन्दिरों, मकानोंमें शहतीरका काम देती है. स्तम्भका पद पाती है।’

‘सीधी लकड़ी हर प्रकारसे अपनी पहली अवस्थाकी अपेक्षा उन्नति पाती और विकास-समन्वित होती है, जब कि टेढ़ीको अवनति और विनाश प्राप्त होता है।’

\times
 \times
 \times

अनुशासनके लिये कुछ लोग क्रोधको आवश्यक मानते हैं। उनका मत है कि क्रोधके बिना नौकर ठीठ हो जायँगे। दफ्तरोंका काम ठीकसे न चलेगा। लड़के बड़ोंका आदर न करेंगे। उनका कहना है कि क्रोध न किया जाय, पर इसका स्वाँग तो करना ही चाहिये। कारण—

सीधी उँगली घी जम्यो क्यों हूँ निकसे नाहिं।

X X X

परंतु मैं जानता और मानता हूँ कि क्रोधका स्वाँग भी खतरेसे खाली नहीं। एक बार ‘अभिमन्यु-वध’ का नाटक खेला जा रहा था। बेटा अभिमन्यु बना था, पिताको उसपर गदाका प्रहार करना था। परंतु क्रोधके आवेशमें पिता भूल बैठा कि उसे स्वाँग ही करना है। गदा-प्रहारसे ‘अभिमन्यु’ की खोपड़ी दरअसल खुल गयी। स्वाँग असलियत बन बैठा। खनके फव्वारोंसे सारा स्टेज रँग गया।

X X X

नौकरों, छात्रों और बालकों, घर-दफ्तरोंमें अनुशासन लानेके लिये न क्रोधकी जरूरत है, न क्रोधके स्वाँगकी। दूसरोंमें अनुशासन लाना है तो पहले अपने-आपको अनुशासित करिये। आपको देखकर ही दूसरे लोग अनुशासनका पालन करने लगेंगे।

“Example is better than precept!”

X

एक दिनकी बात है—‘पूर्णचन्द्रकी चाँदनीसे मणिमय आँगन धुल गया था। यशोदा मैयाके साथ गोपियोंकी गोष्ठी जुड़ गयी थी। वहीं खेलते-खेलते कृष्णचन्द्रकी दृष्टि चन्द्रमापर पड़ी। उन्होंने पीछेसे आकर यशोदा मैयाका घूँघट उतार लिया। और अपने कोमल करोंसे उनकी चोटी खोलकर खींचने लगे और बार-बार पीठ थपथपाने लगे। ‘मैं लूँगा, मैं लूँगा’—तोतली बोलीसे इतना ही कहते। जब मैयाकी समझमें बात नहीं आयी, तब उसने स्नेहार्द्र दृष्टिसे पास बैठी ग्वालिनोंकी ओर देखा। अब वे विनयसे, प्यारसे फुसलाकर श्रीकृष्णको अपने पास ले आयीं और बोलीं—

Hinduism Discord Server <https://discord.gg/dharma> और MADE WITH LOVE BY Avihash/Shashodh/चतुष्पद। जिसने गायों में दूध बनाया है, वह गायी और मैदानों में पशुपति बना दिया।

स्थानका मनपर प्रभाव

(गोलोकवासी सन्त श्रीकेशवरामचन्द्र डोंगरेजी महाराज)

एक बार श्रीराम-लक्ष्मण-जानकीजी एक क्षेत्रमें प्रवेश कर रहे थे। छोटी-सी पगडंडी थी। यह ऐसी भूमि थी कि इसमें आनेके बाद लक्ष्मणजीके मनमें थोड़ा कुभाव आया।

लक्ष्मणजीके मनमें विचार आया कि कैकेयीने रामको वनवास दिया है, मुझे नहीं। मुझे वनमें भटकनेकी क्या आवश्यकता है? मैं राजाका पुत्र हूँ। मैं राजमहलमें रहकर सुख क्यों नहीं भोगूँ? मैं भाईके पीछे-पीछे चलता हूँ, परंतु बड़े भाईका मेरे ऊपर प्रेम कहाँ है? भाभी तो बैठी रहती हैं। सारा काम तो मुझे ही करना पड़ता है। इन लोगोंका मेरे ऊपर तनिक प्रेम नहीं। इन्होंने किसी दिन मुझसे पूछा भी नहीं कि लक्ष्मण! तूने भोजन किया या नहीं? तूने निद्रा ली या नहीं? इनके पीछे मुझे वनमें भटकनेकी क्या आवश्यकता है?

लक्ष्मणजीके मनमें श्रीसीतारामजीके प्रति ऐसा कुभाव आया। श्रीरामचन्द्रजी जान गये कि लक्ष्मणका मन आज थोड़ा बिगड़ा हुआ है। श्रीरामचन्द्रजीने लक्ष्मणजीको आज्ञा की, 'लक्ष्मण! इस क्षेत्रकी थोड़ी-सी मिट्टी तो ले लो।' लक्ष्मणजीने थोड़ी मिट्टी ली, उसकी पोटली बनाकर अपने साथ रख ली।

यह मिट्टी जब-जब लक्ष्मणजीके पास होती, तब-तब लक्ष्मणजीके मनमें बुरा विचार आता था कि रामजीकी सेवा करनेकी मुझे क्या आवश्यकता है? मैं घर लौट जाऊँ अर्थात् अयोध्या चला जाऊँ। मेरी पत्नी उर्मिला वहाँ है। मैं वहाँ सुख भोगूँ। रामजीके पीछे-पीछे भटकनेसे मुझे कोई लाभ नहीं।

लक्ष्मणजी स्नान करते समय पोटलीको अलग रख देते थे। स्नान करते ही मन पवित्र हो जाता और उस समय उनके मनमें ऐसा विचार आता कि श्रीसीतारामजी तो प्रत्यक्ष परमात्मा हैं। मुझे इनकी सेवाका लाभ मिला है। मुझे संसारका कोई सुख भोगना नहीं। मुझे अपना जीवन सफल करना है।

मिट्टीकी पोटली पास होती, उस समय लक्ष्मणजीके

मनमें बुरा विचार आता था और उस मिट्टीको छोड़ देते थे, उस समय मनमें पवित्र भावना जग जाती। तीन-चार दिनतक ऐसा होता रहा। लक्ष्मणजीको आश्चर्य हुआ अन्तमें एक दिन लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीसे पूछा कि 'मुझे ऐसा क्यों होता है?' लक्ष्मणजीने रामजीसे ऐसा होनेका कारण पूछा।

रामचन्द्रजीने कहा—'लक्ष्मण! इसमें तुम्हारा दोष नहीं। यह मिट्टी ही उसका कारण है। यह मिट्टी तुम फेंक दो। जिस भूमिमें जो प्रवृत्ति होती है, उसके परमाणु उस भूमिमें और उस भूमिके वातावरणमें रहते हैं। यह जिस क्षेत्रकी मिट्टी है, उस क्षेत्रमें बहुत वर्ष पहले सुन्द और उपसुन्द नामके दो राक्षस रहते थे।'

श्रीरामचन्द्रजीने सुन्द-उपसुन्दकी समस्त कथा सुनायी—ये दोनों सगे भाई थे। दोनोंके बीच अतिशय प्रेम था। इन दोनों राक्षसोंने उग्र तपश्चर्या की। उनके तपसे ब्रह्माजी प्रसन्न हो गये। ब्रह्माजीने कहा—'वरदान माँगो।'



दोनों भाइयोंने माँग की कि 'हमको कोई मार न सके, ऐसा वरदान दो।' ब्रह्माजीने कहा—'जिसका जन्म होता है, उसको मरना तो पड़ता ही है। तुम मरनेकी कोई

ऊँची जातिका अभिमान, विद्याका घमण्ड, धन, ऐश्वर्य और पदगौरवका महत्त्व, शरीरका सौन्दर्य और उछलती जवानी! यही पाँच काँटे हैं। [सत्संगके बिखरे मोती]

साधकोंके प्रति—

तत्त्वज्ञान

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

❁ परमात्मतत्त्वका ज्ञान करण-निरपेक्ष है। इसलिये उसका अनुभव अपने-आपसे ही हो सकता है, इन्द्रियाँ-मन-बुद्धि आदि करणोंसे नहीं।

❖ जबतक नाशवान् वस्तुओंमें सत्यता दीखेगी,
तबतक बोध नहीं होगा।

❖ बोध होनेपर अपनेमें दोष तो रहते नहीं और गुण (विशेषता) दीखते नहीं।

❖ जो हमारा स्वरूप नहीं है, उसका त्याग (सम्बन्ध-विच्छेद) कर दिया जाय तो जो हमारा स्वरूप है, उसका बोध हो जायगा।

❖ साधकमें कोई भी आग्रह नहीं रहना चाहिये, न द्वैतका, न अद्वैतका। आग्रह रहनेसे बोध नहीं होता।

❖ जबतक अहम् है, तबतक तत्त्वज्ञानका अभिमान तो हो सकता है, पर वास्तविक तत्त्वज्ञान नहीं हो सकता।

❖ जबतक अपनेमें राग-द्वेष हैं, तबतक तत्त्वबोध नहीं हुआ है, केवल बातें सीखी हैं।

❁ तत्त्वज्ञान होनेमें कई जन्म नहीं लगते, उत्कट
अभिलाषा हो तो मिनटोंमें हो सकता है, क्योंकि तत्त्व
सदा-सर्वदा विद्यमान है।

❁ तत्त्वज्ञान अभ्याससे नहीं होता, प्रत्युत अपने विवेकको महत्त्व देनेसे होता है। अभ्याससे एक नयी अवस्था बनती है, तत्त्व नहीं मिलता।

❖ जबतक तत्त्वज्ञान नहीं हो जाता, तबतक सब प्राणी कैदी हैं। कैदीका लक्षण है—पापकर्म करे अपनी मरजीसे और दुःख भोगे दूसरेकी मरजीसे।

❁ ‘मैं ब्रह्म हूँ’—यह अनुभव नहीं है, प्रत्युत अहंग्रह-उपासना है। इसलिये तत्त्वज्ञान होनेपर ‘मैं ब्रह्म हूँ’—यह अनुभव नहीं होता।

❖ तत्त्वज्ञान होनेपर काम-क्रोधादि विकारोंका अत्यन्त अभाव हो जाता है।

❖ जबतक हमारी दृष्टिमें असत्की सत्ता है, तबतक विवेक है। असत्की सत्ता मिटनेपर विवेक ही तत्त्वज्ञानमें परिणत हो जाता है।

❖ अपनेमें और दूसरोंमें निर्दोषताका अनुभव होना तत्त्वज्ञान है, जीवन्मुक्ति है।

❖ तत्त्वज्ञान होनेपर ज्ञानी पुरुष परिस्थितिसे रहित नहीं होता, प्रत्युत सुख-दःखसे रहित होता है।

❁ तत्त्वज्ञान शरीरका नाश नहीं करता, प्रत्युत शरीरके सम्बन्धका अर्थात् अहंता-ममताका नाश करता है।

❖ तत्त्वज्ञान अर्थात् अज्ञानका नाश एक ही बार होता है और सदाके लिये होता है।

❁ जैसा है, वैसा अनुभव कर लेनेका नाम ही 'ज्ञान' है। जैसा है नहीं, वैसा मान लेनेका नाम 'अज्ञान' है।

❖ एक भगवत्तत्त्व अथवा परमात्मतत्त्व ही वास्तविक तत्त्व है, उसके सिवाय सब अतत्त्व हैं।

❖ मिलनेवाली प्रत्येक वस्तु बिछुड़नेवाली होती है, पर जो नित्यप्राप्त परमात्मतत्त्व है, वह कभी किसी अवस्थामें भी नहीं बिछुड़ता, चाहे हमें उसका अनुभव हो अथवा न हो।

✿ परमात्मतत्त्वका वर्णन नहीं होता, प्रत्युत अनुभव होता है।

❁ परमात्मतत्त्वके सिवाय अन्यकी जितनी भी स्वीकृति है, उतना ही अज्ञान है।

❖ सम्पूर्ण देश, काल, क्रिया, वस्तु, व्यक्ति, अवस्था, परिस्थिति, घटना आदिका अभाव होनेपर भी जो शेष रहता है, वही परमात्मतत्त्व है।

❁ वास्तवमें भगवान् भी विद्यमान हैं, गुरु भी विद्यमान हैं, तत्त्वज्ञान भी विद्यमान है और अपनेमें योग्यता और सामर्थ्य भी विद्यमान है। केवल नाशवान् सुखकी आसक्तिसे ही उनके प्रकट होनेमें बाधा लग रही है।

(जयदीप सिंह)

(रा०च०मा०१।३२।२)

सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥

(रा०च०मा० १। मंगलाचरण श्लोक ५)

गोस्वामीजी इस मंगलमयी रामकथाके विषयमें कहते हैं कि मेरी कविता अवश्य ही भद्दी है, परंतु इसमें जगत्का कल्याण करनेवाली रामकथारूपी उत्तम वस्तुका वर्णन किया गया है, अतः वर्ण्य-विषयके आधारपर मेरी कविता भी अच्छी ही समझी जायगी—

भनिति भदेस बस्तु भलि बरनी । राम कथा जग मंगल करनी ॥

(रा०च०मा० १।१०।१०)

अन्यत्र वे कहते हैं कि मेरे द्वारा विरचित इस ग्रन्थमें श्रीरघुनाथजीका उदार नाम है, जो अत्यन्त पवित्र है, वेद-पुराणोंका सार है, मंगलका भवन और अमंगलोंको हरनेवाला है, जिसे पार्वतीसहित भगवान् शिवजी सदा जपा करते हैं—

एहि महँ रघुपति नाम उदारा । अति पावन पुरान श्रुति सारा ॥

मंगल भवन अमंगल हारी । उमा सहित जेहि जपत पुरारी ॥

मनमें रखा था और सुअवसर पाकर इसे पार्वतीजीसे कहा। इसीसे शिवजीने इसको अपने हृदयमें देखकर और प्रसन्न होकर इसका सुन्दर ‘रामचरितमानस’ नाम रखा—

रचि महेस निज मानस राखा । पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा ॥
तातें रामचरितमानस बर । धरेउ नाम हियँ हेरि हरषि हर ॥

(रा०च०मा०१।३५।११-१२)

इस रामकथाके आदिवक्ता भगवान् शिव हैं, सब लोगोंका हित करनेके लिये पार्वतीजीने इसे पूछा था—
कथा जो सकल लोक हितकारी । सोइ पछन चह सैलकुमारी ॥

(रा०च०मा०१।१०७।६)

इस प्रश्नके उत्तरमें शिवजी कहते हैं, श्रीरामजीकी कथा जगत्को पवित्र करनेवाली गंगाजीके समान है। तुम्हारा श्रीरघुनाथजीके चरणोंमें अनुराग है, तुम्हारा यह प्रश्न तो जगतके कल्याणके लिये है—

पूछेहूँ रघुपति कथा प्रसंगा । सकल लोक जग पावनि गंगा ॥

तम्ह रघुबीर चरन अनरागी । कीन्हिह प्रस्न जगत हित लागी ॥

(रा०च०मा०१।११२।७-८)

Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

er <https://dsc.gg/d>
(रा० च० मा० ०१।१०।२०२२)

सफल राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्ण

(श्रीवासुदेवजी शर्मा)

महाभारतके युद्धमें जो विजयश्री पाण्डवोंको प्राप्त हुई, उसका सम्पूर्ण श्रेय तत्कालीन महान् राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्णको ही है। महाभारतका सारा इतिहास श्रीकृष्णकी राजनीतिज्ञतासे ओतप्रोत है। यह बात भी मानी हुई है कि श्रीकृष्ण—जैसे कुशल राजनीतिज्ञ अभीतक प्रकाशमें नहीं आये हैं। जिन राजनीतिज्ञोंको आप देख रहे हैं, उनकी राजनीति श्रीकृष्णकी राजनीतिपर ही अवलम्बित है अथवा यों कहिये कि उनकी राजनीति उक्त राजनीतिका अनुकरणमात्र है। महाभारत—कालका संक्षिप्त विवरण श्रीकृष्णकी राजनीतिज्ञताके दिग्दर्शनार्थ निम्न पंक्तियोंमें प्रस्तुत है—

जब पाण्डव अपने वनवासकी अवधि समाप्त कर चुके तो उनके पक्षके राजाओंने एक सभा की। उसमें बहुत सोच-विचारके बाद यह निश्चय हुआ कि पाण्डवोंने जिस उत्तम ढंगसे अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया है, वह प्रशंसनीय है और अब उनका राज-पाट उन्हें मिलना चाहिये; क्योंकि वनवासकी अवधि पूरी हो गयी है। परंतु दुर्योधनसे राज-पाट वापस प्राप्त होनेकी आशा बहुत कम है, सम्भव है इसके लिये युद्ध करना पड़े, अतएव एक दूत तो कौरवोंकी सभामें हस्तिनापुर भेजा जाय और एक उन राजाओंके पास भेजा जाय जो किसी कारणवश सभामें उपस्थित नहीं हो सके हैं। उनसे यह भी निवेदन कर दिया जाय कि आवश्यकता पड़नेपर वे लोग पाण्डवोंका ही पक्ष लें और यथाशक्ति उनकी सहायता करें; क्योंकि वे धर्म तथा न्यायके लिये लड़ रहे हैं।

कौरवोंकी सभामें हस्तिनापुर जाने और इस झगड़ेके निबटानेका भार भगवान् श्रीकृष्णको सौंपा गया; क्योंकि यह सभी जानते थे कि इस कार्यको उनके अतिरिक्त अन्य कोई भी करनेमें समर्थ नहीं है। जब श्रीकृष्ण कौरवोंकी राजसभामें पहुँचे तो उन्होंने कौरवोंको अनेक प्रकारसे समझाया और पाण्डवोंको केवल इन्द्रप्रस्थ, वृकप्रस्थ, जयंत, वारणावत तथा एक अन्य गाँव, जो

उचित समझें, देनेका प्रस्ताव रखा। दुर्योधन, जो बड़ा चतुर राजनीतिज्ञ था, समझ गया कि इन गाँवोंके माँगनेसे यह अभिप्राय है कि कौरव सदैव पाण्डवोंके आश्रित रहे और वैमनस्यका भी अन्त न हो; क्योंकि ये चारों स्थान कौरवराज्यकी सीमा बन जायँगे और पाण्डवोंको अपने प्रति किये गये व्यवहारकी सदा स्मृति दिलाते रहेंगे। अतएव दुर्योधनने इस प्रस्तावको अस्वीकार करते हुए श्रीकृष्णको स्पष्ट उत्तर दे दिया कि इन गाँवोंकी तो क्या, मैं सूईकी नोकके बराबर भी भूमि बिना युद्धके न दूँगा। यदि कुछ बाहुबलका भरोसा हो तो रणभूमिमें भाग्यकी परीक्षा कर लें।

श्रीकृष्ण असफल हो वहाँसे लौट आये और दोनों ओरसे खुल्लमखुल्ला युद्धकी तैयारी होने लगी। कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी और पाण्डवोंकी सात अक्षौहिणी सेना कुरुक्षेत्रके लम्बे-चौड़े मैदानमें आ उतरी। श्रीकृष्ण अर्जुनके रथवान् बने। उन्होंने अर्जुनके रथको उस समय विपक्षी सेनाका अनुमान लगानेके अभिप्रायसे बीचमें ले जाकर खड़ा कर दिया। जब अर्जुनने रणभूमिमें युद्ध करनेकी इच्छासे एकत्रित अपने मामा, चाचा, दादा, गुरु, मित्र और भाई आदि सम्बन्धियोंको देखा तो उसे आत्मग्लानि हुई और उसने श्रीकृष्णसे कहा—‘मुझे ऐसी विजयकी कामना नहीं है, जिसे अपने सम्बन्धियोंका खून बहाकर प्राप्त किया जाय, मैं नहीं लड़ूँगा, आप मेरा रथ यहाँसे ले चलिये।’ जब श्रीकृष्णने अर्जुनकी ऐसी दशा देखी तो सोचा कि यह तो बना-बनाया काम बिगड़ा जा रहा है। अतः वे अर्जुनको समझाने लगे।

‘वीरश्रेष्ठ अर्जुन! प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि वह अपना कर्तव्य-पालन करे। कर्तव्य-पथसे एक पग भी इधर-उधर होना उचित नहीं है, कर्तव्य-पालन करते समय हानि-लाभ और जीवन-मरणका विचारतक मनमें नहीं आने देना चाहिये। हमारा कर्तव्य केवल कर्म करना है। फल परमात्माके हाथ है। जिस प्रकार हम पुराने वस्त्रोंको उतारकर नये वस्त्र पहन लेते हैं, उसी प्रकार

भीष्मपितामहके बाद ग्यारहवें दिन कौरवोंकी कमान द्रोणाचार्यको सौंपी गयी। उन्होंने रणमें अपनी कुशलताका परिचय भली प्रकार दिया, युधिष्ठिरको पकड़नेकी चालें चली जाने लगीं। पाण्डवोंके विनाशके लिये एक अभेद्य व्यूहरचना की गयी, इसके सम्बन्धमें सिवा अर्जुनके अन्य सब अनभिज्ञ थे। हाँ, वीर अभिमन्यु कुछ जानता था, अभिमन्युकी अवस्था उस समय १६ वर्षकी थी, अर्जुनको कौरव लड़ते-लड़ते जान-बूझकर मोर्चेसे दूर ले गये थे। उनकी अनुपस्थितिमें अभिमन्यु व्यूह भेदकर भीतर घुस गया; किंतु अकेला वीर बालक कई योद्धाओंके बीचमें फँस जानेके कारण वीरगतिको प्राप्त हुआ। इस समाचारको सुनकर पाण्डव बड़े दुखी हुए और उसी समय अर्जुनने जयद्रथ और श्रीकृष्णने द्रोणाचार्यको समाप्त करनेकी प्रतिज्ञा की। उधर अर्जुनने जयद्रथका वध कर दिया। इधर श्रीकृष्णने युधिष्ठिरसे कहा कि आचार्यका अधिक समयतक रहना हमारे लिये खतरनाक है, यदि आप सहायता करें तो काम बन सकता है। युधिष्ठिरने कहा 'वह क्या' तो श्रीकृष्णने कहा कि आचार्यके पूछनेपर आप केवल इतना कह दें कि 'अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा।' पहले तो युधिष्ठिरने धर्मका राग अलापा, परंतु जब श्रीकृष्णने कहा कि 'आप धर्म- धर्म क्या कहते हैं, धर्म वह है, जो मैं कहता हूँ।' यह सुनकर युधिष्ठिर चुप हो गये और प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इधर भीमने अश्वत्थामा

नामक हाथीको मारकर यह अफवाह फैलवा दी कि अश्वत्थामा मारा गया। आचार्यजीने यह प्रतिज्ञा कर रखी थी कि जब मैं अपने पुत्रकी मृत्युका समाचार सुन लूँगा, उस समय युद्ध नहीं करूँगा। जब उन्होंने इस समाचारको सुना तो इसकी पुष्टि युधिष्ठिरसे करानी चाही; क्योंकि उस समय यह प्रसिद्ध था कि युधिष्ठिर कभी झूठ नहीं बोलते, अतः पूर्वयोजनानुसार युधिष्ठिरने कहा कि ‘अश्वत्थामा हतो नरो वा कुञ्जरो वा।’ आचार्यने ‘अश्वत्थामा हतो’ इतना ही सुना, अन्तके शब्द पाण्डवोंद्वारा की गयी शंखध्वनिके बीच विलीन हो गये। इस प्रकार अपने पुत्रकी मृत्युका समाचार सुनकर आचार्यजीने युद्ध करना बन्द कर दिया। उसी समय धृष्टद्युम्नने द्रोणाचार्यका सिर काट डाला।

गया। आशा निराशामें बदल गयी। वह निरुपाय हो युद्धक्षेत्रसे भाग एक जलाशयमें जा छिपा। पाण्डव भी पता लगाते हुए उस जलाशयपर आ पहुँचे। वहाँ पहुँचकर नाना प्रकारसे दुर्योधनको धिक्कारने लगे कि, ‘इस प्रकार कायरोंकी तरह भागकर छिप जाना वीरोंका काम नहीं है, यदि तुम सबके साथ लड़नेमें अपनेको अशक्त समझते हो तो हममेंसे किसी एकसे लड़कर अपना राज्य ले लो।’ दुर्योधनने जब यह सुना तो निकल आया। वह बड़ा चतुर राजनीतिज्ञ था। उसने आते ही कहा कि ‘मैं राजा हूँ और राजाका युद्ध राजाके साथ ही हो सकता है, अतः पाण्डवोंका जो राजा हो, वह मुझसे लड़े।’ जब युधिष्ठिरने यह सुना तो कुछ घबराये; परन्तु श्रीकृष्णके धैर्य बँधानेपर शान्त हुए। श्रीकृष्णने

द्रोणाचार्यके बाद कौरवोंकी सेनाका प्रधान नायक कर्ण हुआ। कर्ण और अर्जुन दोनों बराबरके योद्धा थे। दोनों योद्धा जब युद्धरत थे, उसी समय दैवी घटना हो गयी कि कर्णके रथका पहिया पृथ्वीमें धँस गया। कर्णने अर्जुनसे कहा कि देखो, मैं अपने रथका पहिया निकाल लूँ, उसके बाद फिर युद्ध होगा। अर्जुन इससे सहमत हो गया; परंतु श्रीकृष्णजी इस बातको जानते थे कि कर्णको हराना अर्जुनके वशका नहीं है। अर्जुनसे कहने लगे कि ‘इस समय कर्णका सिर काटनेका अवसर है, अतः अपना काम कर।’ अर्जुनने इसे सुनकर कहा—‘महाराज! यह तो अधर्म है।’ श्रीकृष्णने कहा—‘अधर्म कुछ नहीं है। शत्रुको जब मौका मिले मार दे। यदि इस समय तूने देर की, तो फिर कर्णको परास्त करना तेरे लिये असम्भव है।’ अर्जुनने अपने सखा श्रीकृष्णकी बात मानकर बात-की-बातमें कर्णका सिर धड़से अलग कर दिया।

कर्ण अपने प्राण गवाँ चुका था। युद्ध होते हुए सत्तरह दिन हो गये थे, अठारहवाँ दिन था, शल्य कौरवोंका सेनापति था। युधिष्ठिरने शल्यको मार डाला। कर्णके दोनों पुत्र भी लड़ाईमें मारे गये। इस समाचारको सुनकर दुर्योधन बड़ा दुखी हो चिन्तामग्न हो गया। उसी समय किसीने आकर शकुनिकी मृत्युकी सूचना दी, जिसे सुनकर तो उसका रही-सही साहस भी किनारा कर

गया। आशा निराशामें बदल गयी। वह निरुपाय हो युद्धक्षेत्रसे भाग एक जलाशयमें जा छिपा। पाण्डव भी पता लगाते हुए उस जलाशयपर आ पहुँचे। वहाँ पहुँचकर नाना प्रकारसे दुर्योधनको धिक्कारने लगे कि, 'इस प्रकार कायरोंकी तरह भागकर छिप जाना वीरोंका काम नहीं है, यदि तुम सबके साथ लड़नेमें अपनेकी अशक्त समझते हो तो हममेंसे किसी एकसे लड़कर अपना राज्य ले लो।' दुर्योधनने जब यह सुना तो निकल आया। वह बड़ा चतुर राजनीतिज्ञ था। उसने आते ही कहा कि 'मैं राजा हूँ और राजाका युद्ध राजाके साथ ही हो सकता है, अतः पाण्डवोंका जो राजा हो, वह मुझसे लड़े।' जब युधिष्ठिरने यह सुना तो कुछ घबराये; परंतु श्रीकृष्णके धैर्य बँधानेपर शान्त हुए। श्रीकृष्णने कहा कि 'आप दुर्योधनसे कह दीजिये कि हमने भीमको अपना राजा बना दिया है, अतः तुमको भीमसे लड़ना होगा।' युधिष्ठिरने इसी प्रकार दुर्योधनसे कह दिया। दुर्योधनने कहा कि 'आप जो कहते हैं वह ठीक है; परंतु मेरे विश्वासके लिये आप सब मिलकर मेरे सामने अपने राजाको प्रणाम कर लें।' युधिष्ठिर फिर घबराये। तब श्रीकृष्णभगवान्ने फिर उन्हें समझाया कि इसमें घबरानेकी कौन-सी बात है। क्षत्रिय अपने शस्त्रोंको प्रणाम करते ही हैं। सब भाई आपको छोड़कर भीमको प्रणाम करें और आप चूँकि बड़े हैं, इसलिये भीमकी गदाको प्रणाम करें, दुर्योधन यही समझेगा कि सबने भीमको प्रणाम कर लिया। अतः युधिष्ठिरने वैसा ही किया। दुर्योधनको विश्वास हो गया और भीमके साथ गदायुद्ध करना स्वीकार कर लिया। दोनोंमें गदायुद्ध प्रारम्भ हो गया, युद्ध करते हुए पर्याप्त समय हो गया; परंतु कोई हार नहीं मान रहा था। भगवान् श्रीकृष्णने भीमको थका अनुभवकर उसके हार जानेकी शंकासे जाँघमें गदा मारनेका इशारा किया। भीमने तदनुसार गदाके प्रहारसे जाँघ तोड़ डाली। जंघाके टूटते ही दुर्योधन धराशायी हो गया। उस समय कुछने इसका विरोध किया; क्योंकि गदा-युद्धमें कमरसे ऊपर प्रहार करनेका नियम है, कमरसे नीचे नहीं, परंतु श्रीकृष्ण महाराजने इसके

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्णकी राजनीतिज्ञताने अनुभव करेंगे।

इस वीर बालक राजाका यह वृत्तान्त कर्नल मेटोज टेलरद्वारा लिखित 'स्टोरी आफ माइ लाइफ' (मेरी जीवन-कहानी) नामक पुस्तकसे लिया गया है। भारतके इस बलिदानी बालक राजाके प्रति हमारा कोटि-कोटि नमस्कार!

आज प्रातः लगभग पाँच बजे जब वह दाढ़ी बना रहा था, तब उसने पानीका लोटा खिड़कीमें रख

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

दिया। एक आदमी उस लोटेको उठानेकी नीयतसे खिड़कीके पास आया, पर अन्दर एक व्यक्तिको देखकर लौट गया। उस कमरेके बाहर दरवाजेके पास एक टूटा हुआ उगालदान पड़ा था। वह उसको उठाकर नौ-दो ग्यारह हुआ। उस लड़केने देखा कि कोई व्यक्ति खिड़कीके पास आया और उसको देखकर दरवाजेकी ओर गया और वहाँसे कुछ उठाकर चला गया। वह कमरेके बाहर निकल आया, ठीक उसी समय मैं भी घरसे बाहर निकला। मुझे देखते ही उसने प्रणाम किया और उस घटनासे सूचित किया। मैंने तुरंत अपने अर्दलीको उस आदमीको पकड़ लानेका आदेश दिया।

लगभग आधे घंटेमें वह व्यक्ति पकड़कर मेरे पास लाया गया। उस अर्दलीने पकड़ते समय ही उसकी काफी मरम्मत कर दी थी। तो भी कोठीपर आते ही और लोगोंने उसकी पूजा शुरू कर दी। मेरे अन्दर भी कुछ तामस वृत्तिका प्रादुर्भाव हुआ और मैंने चौकीसे दो कान्स्टेबलोंको बुलाकर उनकी सुपुर्दगीमें उस व्यक्तिको दे दिया।

किसी क्रूर तथा अनिष्टकारक कर्म करनेके बाद हमें ग्लानि होती है और शीघ्र ही कोमल भावनाओंका जन्म होता है और तब उस व्यक्तिसे, जिसके साथ हमने

अन्याय किया है, सहृदयताका बर्ताव करनेकी इच्छा होती है।

जब कान्स्टेबल उसे ले जाने लगे, तब मैंने बहुत नरमीसे कहा—

‘तुम कौन हो और तुमने चोरी क्यों की?’

‘मैं उड़ीसाका एक गरीब ब्राह्मण हूँ। बाढ़से घर-बार तथा खेती नष्ट हो जानेपर मैं भागकर गोरखपुर आया और वहाँ रेलवेमें मजदूरी करने लगा। दुर्भाग्यसे छटनीमें वहाँसे भी निकाल दिया गया और अब कई दिनोंसे यहाँपर हूँ।’ उसकी तलाशी लेनेपर कुछ ऐसे प्रमाण मिले, जिससे उसकी बातोंकी पुष्टि हुई। उसको देखनेसे मालूम होता था कि कई दिनोंका भूखा है।

मुझे उसपर बहुत दया आयी और मैंने कान्स्टेबलको उसे छोड़कर चौकी लौट जानेका आदेश दिया और उस व्यक्तिको भोजनकी सामग्री देकर विदा किया।

‘मेरे जीवनमें यह पहला अवसर था कि एक व्यक्ति चोरी करते हुए पकड़े जानेपर भी मैंने छोड़ दिया और तब भी मुझे कोई मलाल नहीं हुआ, अपितु एक दैवी आनन्दकी अनुभूति हुई। मैंने ऐसा अनुभव किया कि यह इस सात्त्विक वृत्तिका प्रभाव था, जिसका प्रादुर्भाव मेरे जीवनमें संयम एवं नियमके द्वारा हुआ है, जो मेरी साधनाके विशेष अंग हैं।’

शिव-स्तुति

(श्रीब्रह्मबोधिजी)

‘रुद्रों में मैं ही हूँ शंकर’, गीता में श्रीहरि जब बोले ।
ब्रह्मस्वरूप सदाशिव हो तुम, भेद स्वयं ईश्वर ने खोले ॥
सहज-सरल लघु शिलाखंड शिवलिंग तुम्हारा घर बन जाता ।
स्वर्ण नहीं पत्तों, जल-फल से ही निर्धन तुमको हर्षाता ॥
दीनों, दलितों, दुखियोंके ईश्वर हो तुम, करुणा के धाम ।
हे गौरीपति, भोलेशंकर, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम ॥
तुम सात्त्विक-तामसिक सभी के, तुम निर्धन के, तुम धनियों के
भूत-पिशाचों के आश्रय तुम, आश्रय तुम ऋषियों-मुनियों के ॥
तुम सब के औ सभी तुम्हारे, तुम निर्बल के, बलशाली के ।
तुम्हीं हृदय हिमगिरि-तनया के, तुम्हीं निलय दर्गा-काली के ॥

तुम जपते हरिनाम अहर्निश तुमको पूजें राघव राम ।
हे कार्तिकप्रिय, गणपति-वत्सल, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम ॥
सकल सृष्टि कल्याण-हेतु बन, अमृत त्याग हलाहल पीते ।
रह अनिकेत दिगंबर शंकर, चंदन तज शव-भस्म लगाते ॥
ऋद्धि-सिद्धि-ऐश्वर्य-प्रदाता, भवन त्याग हिमशिखर विराजें ।
ध्यान-समाधि कठिन धारण कर, योगीश्वर सब कुछ परित्यागें ॥
चन्द्रमौलि वासुकी-विभूषित, नंदीपूजित, हे सुखधाम ।
हे मृत्युंजय, हे गंगाधर, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम ॥
हे हरिरूप, सुमंगलकारी! ब्रह्मबोधि का तुम्हें प्रणाम ।
हे मृत्युंजय, हे गंगाधर, कोटि-कोटि है तुम्हें प्रणाम ॥

नागपंचमी-व्रत-माहात्म्य

एक बार महाराज युधिष्ठिरने भगवान् श्रीकृष्णसे नागपंचमी-व्रतके विषयमें जिज्ञासा व्यक्त की, तब भगवान् श्रीकृष्णने कहा—‘युधिष्ठिर! दयिता-पंचमी नागोंके आनन्दको बढ़ानेवाली होती है। श्रावणशुक्ला पंचमीमें नागोंका महान् उत्सव होता है। उस दिन वासुकि, तक्षक, कालिक, मणिभद्रक, धृतराष्ट्र, रैवत, कर्कोटक और धनंजय—ये सभी नाग प्राणियोंको अभयदान देते हैं। जो मनुष्य नागपंचमीके दिन नागोंको दूधसे स्नान कराते हैं, दूध पिलाते हैं, उनके कुलमें प्राणियोंको ये सदा अभयदान देते रहते हैं। जब नागमाता कद्रूने नागोंको शाप दे दिया, तब वे रात-दिन संतप्त हो रहे थे। जब उन्हें गायके दूधसे तृप्त किया गया, तबसे वे प्रसन्न होकर प्रिय हो गये।’

युधिष्ठिरने पूछा—‘जनार्दन! माता कद्रूने नागोंको क्यों शाप दिया? उस शापका निराकरण कैसे हुआ?’ भगवान् श्रीकृष्णने कहा—अश्वोंका राजा उच्चैःश्रवा अमृतसे उत्पन्न हुआ था, वह श्वेत वर्णका था। उसे देखकर नागमाता कद्रूने अपनी बहन विनतासे कहा—‘देखो, देखो! अमृतसे उत्पन्न यह अश्वरत्न श्वेत है, पर आज इसके सभी श्वेत बाल काले दिखायी पड़ते हैं। तुम देखती हो या नहीं?’ विनता बोली—‘इस श्रेष्ठ घोड़ेका सर्वांग श्वेत है, न काला है न लाल। कैसे तुम्हें काला दिखायी पड़ता है?’

कद्रू बोली—‘विनता! मैं एक आँखवाली इसे काले बालोंवाला देखती हूँ, परंतु तू दो आँखोंवाली होकर भी नहीं देखती? कुछ शर्त रखो।’ विनताने कहा—‘कद्रू! यदि तुम इसके काले केश दिखा दोगी तो मैं तुम्हारी दासी हो जाऊँगी। यदि तुम काले केश नहीं दिखा पाओगी तो तुम मेरी दासी होगी।’ इस प्रकार शर्त (प्रण)कर वे दोनों क्रुद्ध होकर चली गयीं। रात्रिमें सबके सो जानेपर कद्रूने कुटिलता सोची। उसने अपने पुत्रों—काले नागोंको बुलाकर

कहा कि ‘तुमलोग उच्चैःश्रवाके बाल बनकर उससे चिपक जाओ, जिससे मैं बाजी जीत जाऊँ—विनताको दासी बना लूँ।’ तब उन नागोंने माताकी कुटिलतापर उसे फटकारा कि यह महान् पाप है। हम तुम्हारा कहा नहीं करेंगे। तब कद्रूने क्रुद्ध होकर उन्हें शाप दे दिया—‘जाओ, तुम्हें अग्नि जला देगी। बहुत दिनोंके बाद पाण्डववंशी राजा जनमेजय विकराल सर्पयज्ञ करेंगे। उस यज्ञमें प्रचण्ड पावक तुम्हें जला देगी।’ ऐसा शाप देकर कद्रू चुप हो गयी।

माताके द्वारा शप्त सर्पोंको कुछ सूझा ही नहीं। वासुकि नाग दुःखसे संतप्त हो मूर्च्छित होकर भूमिपर गिर पड़ा। उसे दुखी देख ब्रह्माजी सहसा वहाँ आ पहुँचे और सान्त्वना देते हुए बोले—‘वासुकि! शोक मत करो। मेरी बात सुनो। यायावर वंशमें जरत्कारु नामक द्विज उत्पन्न हुए हैं। आगे चलकर वे बड़े तेजस्वी तपोनिधि होंगे। उन्हें तुम अपनी बहन विवाह दो। उससे आस्तीक नामक विख्यात पुत्र होगा। वह नागोंके विनाशकारी उस नागयज्ञको राजाको समझा-बुझाकर रोक देगा।’

ब्रह्माजीकी बात सुनकर प्रसन्न वासुकिने वैसा ही किया। नागोंको इससे अभयदान मिला।* वे इससे परम प्रसन्न हुए कि उनका वंशधर आस्तीक हम नागोंका विनाश रोक देगा। ब्रह्माजीने उनसे कहा—‘आस्तीकद्वारा तुमलोगोंका यह भय-निवारण (श्रावण-शुक्ला) पंचमीको होगा।’ इसलिये युधिष्ठिर! यह पंचमी शुभादयिता कही जाती है तथा नागोंको आनन्द देनेवाली है। इस तिथिको ब्राह्मणोंको भोजन कराकर नागोंकी इस प्रकार पूजा-प्रार्थना करनी चाहिये—‘भूतलपर जो नाग हैं, वे प्रसन्न हों। जो नाग हिमालयपर रहते हैं, जो आकाशमें हैं, जो देवलोकमें हैं, जो नदियों-सरोवरोंमें हैं और जो बावली-तालाबोंमें हैं, उन सबको नमस्कार है।’ ऐसा कहकर नागों और

* परम्परा है कि नीचे लिखा श्लोक नित्य घरमें आस्तीक ऋषिका स्मरण करते हुए बोलनेसे सर्पोंका भय नहीं रहता—

कुकुल्ले हुं फट् स्वाहा।' इस मन्त्रसे भक्तिपूर्वक सौ पंचमियोंको जो सर्पोंकी पूजा पुष्पोंसे करते हैं, उनके घरमें साँपोंका भी भय नहीं होता। [भविष्यपुराण]

विप्रोंकी यथायोग्य पूजाकर उनका विसर्जन करे। तत्पश्चात् सेवकों और परिजनोंसहित स्वयं भोजन करे। पहले मधुर पदार्थ खाये, पीछे अन्य भोज्य पदार्थ स्वेच्छया ग्रहण करे। इस प्रकार व्रत-नियम करनेवाला मरनेके बाद नागलोकको जाता है, वहाँ अप्सराएँ उसकी पूजा करती हैं और वह श्रेष्ठ विमानपर आरूढ़ हो अभीष्ट कालतक विहार करता है। वहाँसे पुनः इस भूतलपर जन्म लेनेपर वह राजाधिराज होता है। उसके पास सभी रत्नोंका भण्डार होता है, सवारियाँ होती हैं, सम्पत्ति होती है। वह पाँच जन्मोंतक निरन्तर राजा होता है। उस अवधिमें वह आधि-व्याधिसे मुक्त रहता है। पत्नी और पुत्र, उसके सहायक—अनुकूल होते हैं। इसलिये नागोंकी घी-दूध आदिसे सदा पूजा करनी चाहिये।

युधिष्ठिरने पुनः पूछा—‘भगवन्! क्रुद्ध नाग जिस व्यक्तिको डस लेते हैं, उनका क्या होता है?’ भगवान् श्रीकृष्ण बोले—‘राजन्! नागके डसनेसे मृत्युको प्राप्त व्यक्ति अधोलोकमें गिरता है। वहाँ वह विषहीन सर्प होता है।’ युधिष्ठिरने पुनः पूछा—‘साँपके काटनेसे जिसके पिता-माता, भाई-मित्र, पुत्र, बहन, कन्या या स्त्री—कोई भी सम्बन्धीजन मर जाते हैं, उनके उद्धारके लिये उसे क्या दान-व्रत-उपवास करना चाहिये, जिससे वे स्वर्गको प्राप्त हों।’

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—‘राजन्! उन्हें नागोंको प्रसन्न करनेवाली पंचमीका व्रत एक वर्षतक करना चाहिये। उसका विधान सुनिये—भाद्रपदमासके शुक्लपक्षकी पंचमी अधिक पुण्यकारक है। सद्गतिकी कामनासे उसे ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार एक वर्षमें बारह पंचमियाँ होती हैं। व्रतके पूर्व दिन चतुर्थीको रात्रिमें एक अन्न ग्रहण करना चाहिये। दूसरे दिन पंचमीको नागकी पूजा करनी चाहिये। सोने या चाँदी या लकड़ी अथवा मिट्टीका पाँच फनोंका नाग बनवाकर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उसकी पूजा करे। उन्हें करवीरके फूल, कमलके फूल, सुन्दर जाती-पुष्प, चन्दन, नैवेद्य आदि समर्पितकर पूजा करे। पूजाके

पश्चात् ब्राह्मणको भोजन कराये। ब्राह्मण-भोजनमें घी-खीर-मोदककी प्रधानता होनी चाहिये। सर्पके काटनेसे मरे हुए प्राणीके लिये नारायणबलि करे। दान और पिण्डदानमें ब्राह्मणोंको तृप्त करना चाहिये। एक वर्ष पूर्ण होनेपर वृषोत्सर्ग करना चाहिये। स्नानकर जलदान करे—‘श्रीकृष्ण प्रसन्न हों—यह प्रार्थना करे। प्रत्येक मासमें अनन्त, वासुकि, शेष, पद्म, कम्बल, अश्वतर, धृतराष्ट्र, शंखपाल, कालिय, तक्षक तथा पिंगल नामक महानागोंका नामोच्चारण करना चाहिये। वर्षकी समाप्तिपर पारणके समय ब्राह्मणोंको भोजन कराये। इतिहासवेत्ता (विद्वान्) विप्रको स्वर्णका नाग तथा सवत्सा सीधी गौ, कांसेकी दोहनी (दुग्ध दुहनेका पात्र)—सहित देनी चाहिये।

विद्वानोंने यह पारणविधि बतायी है। इस श्रेष्ठ व्रतके करनेसे बान्धवोंको सद्गतिकी प्राप्ति होती है। सर्पादिके काटनेसे जिनकी अधोगति हो जाती है, उनके निमित्त यदि एक वर्षतक यह उत्तम व्रत भक्तिपूर्वक किया जाय तो वे जीव उस यातनासे मुक्त होकर शुभगतिको प्राप्त होते हैं। जो भक्तिपूर्वक नित्य इस आख्यानको पढ़ता या सुनता है, उसके कुटुम्बमें नागोंसे कोई भय नहीं होता। इसी प्रकार जो भाद्रपदशुक्ला पंचमीको काले रंगोंसे नागोंका चित्र बनाकर गन्ध-पुष्प-घी-गुग्गुल-खीर आदिसे भक्तिपूर्वक पूजन करता है, उसपर तक्षक आदि नाग प्रसन्न होते हैं। उसके सात कुल (पीढ़ी)—तक नागोंसे भय नहीं रहता। इसी प्रकार आश्विनमासकी शुक्ला पंचमीको कुशका नाग बनाकर इन्द्राणीके साथ उनकी पूजा करे। घी-दूध और जलसे स्नान कराकर दूधमें पके गेहूँ तथा अन्य भोज्य पदार्थ उन्हें श्रद्धा-भक्तिपूर्वक समर्पित करे तो शेष आदि नाग उसपर प्रसन्न होते हैं, उसे सुख-शान्ति प्राप्त होती है। मृत्युके बाद वह प्राणी उत्तम लोकको प्राप्त करता है, जहाँ चिरकालतक आनन्द भोगता है। यह पंचमीव्रतका विधान है। सर्पोंका सर्वदोष-निवारक मन्त्र यह है—‘ॐ कुरुकुल्ले हुं फट् स्वाहा।’ इस मन्त्रसे भक्तिपूर्वक सौ पंचमियोंको जो सर्पोंकी पूजा पुष्पोंसे करते हैं, उनके घरमें साँपोंका भी भय नहीं होता। [भविष्यपुराण]

जीवनमें सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे हो ?

प्रसिद्ध उद्योगपति लक्ष्मीपति सिंहानियाके बारेमें अपने संस्मरणमें स्वामी अखण्डानन्दजीने लिखा है कि एक बार भाई लक्ष्मीपतिसे कोई सत्संगका प्रसंग चल रहा था, जिसमें उन्होंने पूछा कि मनुष्यके जीवनमें सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे होती है ? इसपर मैंने उनको श्रीमद्भागवतका यह श्लोक सुनाया—

आगमोऽपः प्रजा देशः कालः कर्म च जन्म च ।

ध्यानं मन्त्रोऽथ संस्कारो दशैते गुणहेतवः ॥

(११।१३।४)

इस श्लोकका अर्थ और व्याख्या उन्हें बहुत पसन्द आयी, जो इस प्रकार है—

मनुष्यके जीवनमें सत्त्वगुण, रजोगुण या तमोगुणका प्रकाश-विकास अथवा वृद्धि-समृद्धिके लिये दस बातोंका ध्यान रखना आवश्यक है। यदि वे सात्त्विक होंगी तो जीवनमें सद्गुणोंका विकास होगा। वे दस बातें इस प्रकार हैं—

१-आप अध्ययन क्या करते हैं ?

हृदय पवित्र करनेवाले उपनिषद्, गीता, भागवत, रामायण आदि ग्रन्थ। भोग-विलास, धनोपार्जन-सम्बन्धी पुस्तकें अथवा भूत-प्रेत, चोर, डाकू आदिके काल्पनिक ग्रन्थ या बेईमानी, चालाकी, तिलस्माती या वासना बढ़ानेवाली कहानियाँ ? आपके जीवनको अपनी-अपनी दिशामें आकृष्ट करनेवाली यही किताबें हैं।

२-आप कैसे जलका सेवन करते हैं, स्नानमें, पानमें, भोजनमें ?

भगवान्का चरणामृत, पवित्र नदी एवं स्रोतोंका जल, फलोंका रस, शाकोंके द्वारा निर्मित पेय अथवा सुरा आदि ? आप जलके प्रभावसे मुक्त नहीं रह सकते।

३-आप कैसे लोगोंमें रहना, मिलना-जुलना पसन्द करते हैं ?

आप जैसे लोगोंमें रहेंगे, बड़ा मानकर सेवा करेंगे और जैसा होना चाहेंगे, वैसे हो जायेंगे।

४-आपको मनसे कैसे स्थान प्रिय हैं ?

नदी-तट, पर्वत, हरी-भरी वनराजि, तीर्थ, मन्दिर,

सन्तोंका निवास अथवा जहाँ सत्संग हो रहा हो, वैसी भूमि। आप स्वयं अपनी रुचिको परखिये, निरखिये। आप वैसे ही होने जा रहे हैं।

५-आप अपना समय कैसे व्यतीत करते हैं, निद्रा, आलस्य, प्रमादके कारण निकम्मे तो नहीं हो रहे हैं ?

आप अर्थलिप्सा एवं भोग-वासनासे आक्रान्त होकर कर्म करते हैं ? निश्चय ही आपके जीवनमें विक्षेपकी वृद्धि होगी। आप अपने जीवनके अमूल्य क्षणोंका कौन-सा अंश सत्यके चिन्तनमें, एकाग्रतामें, भगवद्भक्तिमें एवं लोकहितमें लगाते हैं ? आपका एक क्षण आपके जीवनको स्वर्ग एवं नर्क बनानेमें समर्थ है।

६-आपको क्या करना पसन्द है ?

चोरी, हिंसा, पक्षपात ? मोहसे प्रेरित कर्मोंसे बचनेका प्रयास करते हैं ? स्वयं कष्ट सहकर भी दूसरोंका हित करनेका प्रयत्न करते हैं या नहीं। कर्म बाहरसे देखनेमें कितना भी छोटा हो, उसका प्रभाव बहुत व्यापक होता है। भले दूसरोंको उसका पता न लगे, परंतु आपका अन्तःकरण उसके प्रभावसे मुक्त नहीं रह सकता। प्रत्येक क्रियाकी प्रतिक्रिया होती है और वह अपने अंग-अंग और अन्तरंगपर भी होती है। सबसे अच्छा यह होगा कि आप कोई कर्म करनेके पहले इस ओर गम्भीरतासे ध्यान दे लें कि इससे मेरी आदतें सुधरेंगी या बिगड़ेंगी। जिससे किसीका अहित होता हो और अपनी आदत बिगड़ती हो, ऐसा कर्म कभी नहीं करना चाहिये।

७-किस वंशमें आपका जन्म हुआ, यह तो एक गौण बात है।

अतः शरीरका जन्मदाता शिक्षक अथवा गुरु होता है। उत्तम वंश-परम्परा, दोषापनयन एवं गुणाधानरूप संस्कार और सदाचारका पालन—ये तीनों ही हमारे जीवनको सँवारते हैं। जीवनमें सदाचारकी स्थिति ही सच्चा जीवन है। आप अपनी बुद्धि-तुलापर तौलकर देख लीजिये कि यह आपका जन्म अपने आचरणसे कुलीन

[प्रेषक—प्रो० श्रीसन्तोष कुमारजी तिवारी]

जपके सम्बन्धमें सत्रकार कहता है—‘तज्जपस्तदर्थ-

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

व्याप्त हैं। अतः उनका किया हुआ जप यथार्थ फल नहीं देता।

तामस बहुत रजोगुन थोरा । कलि प्रभाव बिरोध चहुँ ओरा ॥

युगके प्रभावसे मनुष्योंका काम अनधिकार चेष्टाकी कोटिका हो रहा है। इसीसे जप करनेके उपरान्त भी मनको शान्ति नहीं मिलती। आचार्योंने जपकी तीन विधियाँ बतायी हैं। जब बुद्धिसे अक्षरश्रेणी और स्वरयुक्त पदका उच्चारण करके अर्थकी भावना रखी जाती है, तब ‘मानसजप’ कहलाता है। जब जिह्वा-ओष्ठको किंचित् चलाकर, मनमें इष्टदेवका ध्यान रखकर किंचित् श्रवणयोग्य उच्चारण होता है, तब ‘उपांशु जप’ कहलाता है और जब वैखरी वाचासे उच्चारण किया जाता है, तब वह ‘वाचिक जप’ कहलाता है। इस तरह ‘वाचिक’ से ‘उपांशु’ और ‘उपांशु’ से मानसिक जप अधिक श्रेष्ठ बताया जाता है।

यह परम्परागत रूढ़ि है। इसमें अधिकांश जनता फँसी हुई है। कहा गया है—‘गतानुगतिको लोकः।’ संसार ही भेड़िया-धसानका काम करता है। बहिरंगवालोंका अनुकरणप्रिय होना सहज है, इसलिये अधिकांश जनता मनमानी करने लग जाती है। उनको विचार करना कठिन जान पड़ता है।

यहाँ नवीन ढंगसे जपपर विचार किया जाता है। 'जप' शब्दका विश्लेषण करनेसे 'ज' से जन्मजात और 'प' से पालन करना प्रतीत होता है। अतः जपका हेतु अपनी जन्मजात वस्तुका पालन करना है। शरीरनिर्माणमें जठराग्नि, वीर्याग्नि और ज्ञानाग्नि (चेतना)-का आरम्भ हुआ है। वेदमन्त्रमें कहा है—

‘अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारं
रत्नधातमम् ।’

‘मैं यज्ञके (जीवनके) ऋतुके अनुसार काम करनेवाले पूर्व ही रखे हुए (स्थित) अग्निदेवकी स्तुति या पूजा करता हूँ। वह आवश्यक सामग्री (आहुति) डालनेवाला और रत्न (श्रेष्ठ वस्तु) धारण करनेवालोंमें सर्वोत्कृष्ट है। हमारे शरीरोंमें अग्निदेव तीनोंमें सर्वोत्कृष्ट है।’

आयुर्वेदानुसार खान-पानको शुद्ध रखकर जठराग्निका; संयम, नियम या ब्रह्मचर्यसे वीर्याग्निका और ईश्वरार्चन, ध्यान या स्वाध्याय (वेदपाठ आदि) से ज्ञानाग्निका संरक्षण करना चाहिये। इनका यथोचित संरक्षण करना ही 'जप' का ठीक ढंग होगा। जपमें निरन्तर स्मरण करते रहना आवश्यक है और भावनाके प्रतिकूल कामोंको सर्वथा छोड़ देना। यदि बालकोंको कुछ वस्तु (पुस्तक, कलम, पट्टी, कापी, कुर्ता, चप्पल आदि) लानेका वचन दे दो, तो वे उस वस्तुका निरन्तर स्मरण करते और माता-पिताको तंग किया करते हैं। उनको तो उस वस्तुकी लौ लग जाती है, मानो वे उस वस्तुका जप करते हैं। यद्यपि यह निकृष्ट जप है, तथापि विधि ठीक है। इसी लौसे हमको अपनी पूर्वस्थित तीनों अग्नियोंका संरक्षण करनेमें सचेत रहना चाहिये।

इन अग्नियोंके सिवा शरीर-रचनामें पंच महाभूत (तत्त्व) भी उपस्थित रहते हैं। प्रत्येक तत्त्व अपने गुणका अधिष्ठान है। पृथ्वीमें क्षमा, जलमें नम्रता, शीतलता, अग्निमें शुद्धता, वायुमें अनासक्ति, गतिशीलता, आकाशमें निर्लेपता है। ये सब हमारे शरीरके साथ ही उत्पन्न हुए हैं। नहीं, इनका मिश्रण ही हमारा शरीर है। अतः इन गुणोंका विकास करना आवश्यक है। विषयोंमें फँसकर इन गुणोंको दबा देना ही दुःखों और व्याधिका कारण हो जाता है। इनका संतुलन रखनेसे मनुष्यका मन स्थिर होकर काम करता है। इन्हीं तत्त्वोंसे ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियोंका आविर्भाव हुआ है। इन तत्त्वोंका संतुलन रखनेसे इन्द्रियाँ संयमित रहती हैं। इन्द्रियोंके संयमसे मनमें प्रसन्नता आती है। प्रसन्नतासे सब दुःखोंका नाश हो जाता है; क्योंकि प्रसन्न चित्तसे बुद्धि स्थिर होती है और मनुष्य सुखी होता है। जपमें अर्थकी भावनासे हीन मनुष्यका मन अशान्त रहता है। अशान्त कभी सुखी नहीं हो सकता। तीनों अग्नियोंका संरक्षण करके पंच-तत्त्वोंका संतुलन रखकर जीवन-निर्वाहार्थ काम करते रहना जीवनोपयोगी काम है।

तू मेरी शठताका मर्म नहीं जानता। (मेरा स्वभाव शठ हो गया है) (मानसपीयूष ख०६, पृ०५२) टिप्पणीके अनुसार लंकानगरीकी अधिष्ठात्री देवी लंका (लंकिनी) दैवीय प्रकृतिकी होनेके कारण देवताओंकी कृपाभूता थी। इसी आधारपर उसने रावणको वरदान देने आये ब्रह्माजीको

(रा०च०मा० ५।५।१)

घने वनके बीच गायोंके बाड़ेमें झेन फकीर अपनी अजेय तलवारको धार लगा रहा था। तरुणने दौड़कर फकीरके पैर पकड़ लिये। झेन फकीरने तरुणको देखा और अनदेखा कर दिया, परंतु तरुण इसी प्रतीक्षामें पैर पकड़े बैठा रहा कि कभी-न-कभी तो गरु उससे पछेंगे कि क्यों आये

इस रोचक कथाके अन्तिम पड़ावके रूपमें वर्षों बाद झेन फकीरके गुरुभाई आये। उन्होंने उलाहना दिया कि अब आनन्द है। चेला काम कर रहा है। फकीरने उत्तर दिया कि तलवार-ध्यान क्या खाक सीखेगा, दूध पकानातक नहीं आता। लो, आज तुम और मैं असली तलवारसे इसकी गलतीकी सजा देंगे। तरुणका ध्यान नंगी तलवारोंके भयसे काँप उठा। उसके हाथ डगमगाये और घड़ेसे दूध छलका। दोनों झेन फकीर नंगी तलवार लिये मारनेके लिये दौड़े। तरुण अपने बचावमें निहत्था लगा था। वह बचनेपर ध्यान केन्द्रित किये रहा। वह बिजलीकी तरह हरकतमें आया। तलवारोंकी धारोंसे बचनेके लिये अपनी गति तेज की। शरीरको कुशल नटों-सा साधा। वह नंगी तलवारोंपर नृत्य कर रहा था। आखिर उसने दोनोंको गिराकर उनकी तलवार उन्हींके सीनेपर रख दी। सुखद आश्चर्य यह रहा कि दोनों फकीरोंने ताली बजाकर अट्टहास किया! तरुण हतप्रभ हुआ! झेन फकीरने उसके मस्तकको छूकर विश्वका सर्वश्रेष्ठ तलवार ध्यान-साधक घोषित किया। उन्होंने कहा—‘हे पुत्र! हमने तुम्हें बचावके द्वारा ध्यान-साधनाका महारथी बनाया है। तभी तुम सर्वश्रेष्ठ तलवारबाजोंको पराजित कर सके। इसे रक्षा-ध्यान कहते हैं।’

समरूप रहकर ही क्रोधपर नियन्त्रण

(श्रीविजयजी सिंगल)

मानवीय कष्टोंके विभिन्न कारणोंमेंसे क्रोध एक प्रमुख कारण है। जब कोई अपना आपा खो देता है, तो वह अपना विवेक भी खो देता है और ऐसे काम कर बैठता है, जिसके कारण उसे बादमें पछताना पड़ता है। ऐसा अविवेकपूर्ण व्यवहार न केवल सम्बन्धित व्यक्तिके लिये बल्कि उसके आसपासके अन्य लोगोंके लिये भी समस्याएँ पैदा कर देता है। भगवद्गीतामें क्रोधके वशीभूत रहनेवालोंको आसुरी प्रकृतिका और क्रोधसे मुक्त लोगोंको दैवीय प्रकृतिका कहा गया है। वास्तवमें श्रीकृष्णने क्रोधको नरकके तीन द्वारोंमेंसे एक घोषित किया है। ‘नरकके तीन द्वार हैं—काम, क्रोध तथा लोभ। इन तीनोंको त्याग देना चाहिये; क्योंकि इनसे जीवका पतन होता है।’

श्रीकृष्णने अर्जुनके साथ अपने संवादमें क्रोधकी कार्यशैलीका विश्लेषण किया है। यह पूछे जानेपर कि ऐसी कौन-सी शक्ति है, जो व्यक्तिको उसकी अपनी इच्छाके विरुद्ध भी मानो बलपूर्वक पाप करनेके लिये प्रेरित करती है, श्रीकृष्णने उत्तर दिया कि समस्याका मूल कारण है वासना, जो अतृप्त रहनेपर क्रोधके रूपमें प्रकट होती है। यह मानव-जातिकी सर्वभक्षी और सबसे बड़ी शत्रु है। वासनाको मनुष्यका सतत शत्रु कहा गया है, क्योंकि अग्निकी भाँति इसकी भूख कभी भी पूर्णतः तृप्त नहीं होती।

गीतामें क्रोधके बारेमें कहा गया है कि जब कोई व्यक्ति किसी वस्तुके सम्पर्कमें आता है तो उसके लिये उसके मनमें एक लगाव (राग या द्वेष) विकसित हो जाता है। वह उस वस्तुको पसन्द या नापसन्द करने लगता है। ऐसी पसन्द या नापसन्दसे उस वस्तुको पाने या उससे छुटकारा पानेकी इच्छा उत्पन्न होती है। इच्छाकी पूर्ति न होनेसे क्रोधकी उत्पत्ति होती है। इन्द्रियोंके विषयोंका चिन्तन करनेसे उनके प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है। आसक्तिसे कर्मानुबन्ध होता है और

कामनाकी पूर्ति न होनेसे क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोधसे भ्रम पैदा होता है, जिससे स्मृतिकी हानि होती है अर्थात् व्यक्ति भूल जाता है कि उचित क्या है और अनुचित क्या है। स्मृतिकी हानिके फलस्वरूप बुद्धिमें गिरावट आती है। बुद्धिके नाशके साथ मनुष्यका नाश होता है।

क्रोधसे मुक्तिको आत्मिक ज्ञान प्राप्त करनेकी आवश्यक शर्तोंमेंसे एक महत्त्वपूर्ण शर्त घोषित किया गया है। केवल उसी व्यक्तिकी बुद्धि स्थिर होती है, जो कि क्रोधसे मुक्त है। श्रीकृष्णने आगे कहा है कि केवल वही व्यक्ति इस संसारमें सुखी रह सकता है, जो काम और क्रोधके आवेगोंको सहन करनेमें समर्थ है। भगवद्गीतामें केवल लक्ष्णोंको रोकनेके बजाय, इसमें क्रोधके मूल कारणसे निपटनेपर जोर दिया गया है।

जब इन्द्रियाँ भौतिक दुनियासे सम्बन्धित विभिन्न विषयों (जैसे अलग-अलग लोग, धन या सत्ताकी प्रतिष्ठा इत्यादि)-के सम्पर्कमें आती हैं तो मनुष्यमें उनको प्राप्त करनेकी आकांक्षा प्रकट होती है। प्रत्येक इन्द्रिय अपनेसे सम्बन्धित विषयोंके प्रति राग और द्वेषका भाव रखनेके लिये प्रेरित करती है। श्रीकृष्णने यह समझाया है कि मनुष्यको पसन्द और नापसन्दका दास नहीं बनना चाहिये, क्योंकि यह दोनों ही आध्यात्मिक विकासमें बाधा डालते हैं। दूसरे शब्दोंमें, अपनी पसन्द और नापसन्दको संयत करके व्यक्ति अपनी इच्छाओं, क्रोध और भय आदिसे मुक्त हो सकता है।

श्रीकृष्णने बार-बार चित्तकी समताके महत्त्वपर प्रकाश डाला है। जो कोई मनुष्य सफलता-असफलता, हानि-लाभ आदिमें समरूप होकर रहता है, क्रोध उसपर कभी भी हावी नहीं हो सकता। ऐसा समभाववाला व्यक्ति स्वार्थपूर्ण वासनाओं, अनुचित अपेक्षाओं तथा क्रोधके अकस्मात् विस्फोटसे उत्पन्न परेशानियोंमें नहीं फँसता।

कौन-सा मार्ग ग्रहण करें ?

(प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र)

एक महोदय लिखते हैं, 'मैंने आपके अनेक लेख और पुस्तकें पढ़ी हैं, पर एक चीज मेरे दिलमें हमेशा यह खटकती रहती है कि बेईमानी क्यों फलती-फूलती है ?' आप कहते हैं—'लक्ष्मी उसीकी दासी है, जो ईमानदारीसे व्यापार या सच्चे मनसे परिश्रम करते हैं।' मैं परिश्रम करता हूँ, सदा ईमानदार रहता हूँ, पर इन दोनोंके बावजूद न मुझे लक्ष्मी मिली है और न शान्ति ही, सामाजिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त नहीं हुई। आखिर बतलाइये मैं अब क्या करूँ ? ईमानदारीके रास्तेमें भूख, विवशता, गरीबी है। परिश्रम और ईमानदारीसे काम कर-करके मैंने अपना स्वास्थ्य खो दिया और साथ ही लक्ष्मीकी कृपा भी ! अब प्रार्थना यह है कि मेरी गुत्थी सुलझा दें कि चोरी, बेईमानी, कालाबाजारी, रिश्वत, घूसखोरी और दूसरोंकी आँखोंमें धूल झोंकनेसे क्यों महल खड़े होते जाते हैं और इसके विपरीत सच्चे मजदूर, नेकनीयत इन्सान और ईमानदारको क्यों दाने-दानेके लिये तरसना पड़ता है ? किसको सच्चा मानूँ ? आपके लेखोंको या समाजके इस उत्थान-पतनको ?

ईमानका सम्बन्ध मनुष्यके गुप्त मनसे है। हमारी अन्तरात्मा जिस कार्यको उचित कहती है या स्वीकार करती है, उस आचरणको करनेवाला ईमानदार कहलाता है। ईमानदारीसे कार्य करनेमें हमें अन्दरसे ही एक गुप्त शान्ति और सन्तोषका अनुभव होता है। इसके विपरीत आत्माका हननकर बेईमानीसे कार्य करनेपर हमारा गुप्त मन हमें अन्दर-ही-अन्दर कचोटता रहता है। हमें शान्ति नहीं मिलती। हमेशा यह गुप्त भय रहता है कि हमारी बेईमानी या चोरी किसीको किसी दिन किसी भी अवसरपर प्रकट न हो जाय। जैसे जलसे शरीर शुद्ध होता है, वैसे ही सत्याचरणसे मन और बुद्धि पवित्र हो जाते हैं।

हनन की हुई आत्मा ही हमें बेईमानीकी ओर जाने देती है और दुष्कर्म कराती है। असत्य या बेईमानीके कार्यद्वारा असत्य कार्य करने, रिश्वत, घूस, चोरबाजारी आदि चोरियाँ करनेसे धीरे-धीरे हमारी अन्तरात्मा मर जाती है। हनन की हुई आत्मामें सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म, उचित-अनुचितका विवेक नहीं रहता। अतः

बहुत-से व्यक्ति चोरी करते हुए भी बाहरसे सन्तुष्ट-से प्रतीत होते हैं, पर बुरे कार्योंकी सूक्ष्म रेखाएँ अन्तश्चेतनाके ऊपर अंकित होती रहती हैं और मनपर सदा आघात करती हैं। एक-न-एक दिन पाप प्रकट होता ही है और करनीका फल मिलता ही है।

ईमानदारीके मार्गके साथ आपको आत्माकी दैवी शक्तियोंका भी सहयोग मिलता रहेगा। सच्चे व्यक्तिको कभी किसी गुप्त भेदके प्रकट होनेका कोई भय नहीं रहता। वह तो खरा है। चाहे किसी कसौटीपर चढ़ा लीजिये, सदैव चमकता ही रहेगा। सत्, चित्, आनन्द-स्वरूप आत्मा इसीलिये इस भूमण्डलपर भेजा गया है कि वह सत्यका ही व्यवहार करे, असत्य या झूठके अन्धकारसे बचा रहे। जो व्यक्ति यह समझता है कि बेईमानीसे लोगोंकी आँखोंमें धूल झोंककर बढ़ता रहेगा, वह वास्तवमें बड़ी भूल करता है। बेईमानी, चोरी, रिश्वत तो एक प्रकारकी अग्नि है। वह कब छिपती है ? उसे चाहे सौ कपड़ोंमें लपेटकर रखा जाय, एक-न-एक समय कपड़ोंको जलाकर प्रकट हो ही जाती है। ईश्वरने आपको 'सत्यं शिवं सुन्दरं' से युक्त आत्मा (अर्थात् अपना दिव्य अंश) इसीलिये दिया है कि आप असत्यसे बचकर सत्यके, ईमानदारीके, प्रकाशके मार्गको ही ग्रहण करें।

बेईमानी चार दिन ही फलती-फूलती-सी दीखती है। वास्तवमें वह अवनतिका ही रूप होती है। दीपक जब बुझनेको होता है, तब तेजीसे चमककर शान्त हो जाता है। इसी प्रकार बेईमानीकी दौलतसे, रिश्वतके धनसे घर-परिवार क्षणभरके लिये समृद्ध प्रतीत होते हैं; पर चोरीके प्रकट होते ही वे ऐसे गहरे खड्डेमें गिर पड़ते हैं, जिससे निकलना असम्भव हो जाता है। वे दीर्घकाल-तक असत्यके अन्धकारमें भटकते रहते हैं। अतः पहलेसे ही ईमानपर टिके रहनेका व्रत ले लेना चाहिये।

बेईमानीकी दौलत उसीके साथ नष्ट हो जाती है। क्या आपने किसी बेईमानकी सन्तानको फलते-फूलते देखा है ? अगर बेईमान फलते-फूलते रहते, तो इस संसारमें सभी बेईमानी, ठगी और चोरीपर आ जाते। सत्य संसारसे लुप्त हो जाता, केवल पाप ही रहते। चोरों,

केवल भगवान्की पूजा करनेके लिये आपके पास कालावकाश है। अधिक परमार्थ-साधनाके लिये भी कालावकाश नहीं है। इस विषयको ज्यों-का-त्यों स्वीकार करके यह उत्तर लिखता हूँ, देवपूजार्थ आवश्यक फूल, तुलसी, गन्ध, धूप, दीप—इत्यादि सामग्रियोंमें भी आप ईश्वर-सम्बन्ध जोड़नेका अभ्यास करें। अपने आँगनके अल्प भागमें सुन्दर पूजाके योग्य फूलोंके पौधे लगाकर, स्वयं ही उनमें पानी दें, परिवारवालोंमें भी उस

आप प्रातःकाल जो पूजा कर रहे हैं, उसको नित्य व्यवहारके लिये आप संकेत बनाइये। आप चाहे किसी भी व्यवहारमें लग जाइये, वहाँ आपको उपलब्ध होनेवाली सामग्री और सुविधा भी परमेश्वरकी आराधनाके लिये उपकरणमात्र है। इतना ही नहीं, आपका सम्पूर्ण जीवन ही ईश्वरकी आराधना है—इस प्रकार सतत भावना करिये। आपके लिये आवश्यक जो सुख—शान्तिका भोग है, वह तो ईश्वरको अर्पण करके उससे प्रसादरूपसे प्राप्त भोग है—ऐसी भावना निरन्तर चलाते रहिये। इसके अतिरिक्त और कोई भी साधनाकी आवश्यकता नहीं है।



Hinduism Discord Server: <https://discord.gg/dharma-1> MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

प्रांगणमें ही देवरानी-जेठानीके मन्दिर पूर्णतया भग्नावशेषके रूपमें अवस्थित हैं, पर महादेवके मन्दिरका कहीं कोई निशान नहीं है। पुरातत्त्व विभाग इन मन्दिरोंका अन्वेषण करनेमें व्यस्त है। पुरातत्त्वविभाग

कालान्तरमें किन्हीं कारणवश पूज्य पण्डितजीके पूर्वज आगरा जिलेके अन्तर्गत टूणडलाके पास चूल्हावली ग्राममें आकर बस गये और वहीं रहने लगे। इसी कारण

एक बार कोलकातासे आप ट्रेनसे वापस आ रहे थे। तीसरे दर्जेके डिब्बेमें बैठे थे, साथमें कुछ अन्य लोग जो आपसे परिचित नहीं थे, वह भी यात्रा कर रहे थे। उन्होंने देखा कि रास्तेके हर स्टेशनपर कुछ स्त्री-पुरुष आपसे मिलने आते, जिसमें उनके परिचित कुछ रेल अधिकारी भी थे। कई स्टेशन निकल जानेके बाद सहयात्रियोंमेंसे एकने पूछा, 'आप कौन हैं? आप अधिकारी मालदार तो नहीं लगते; क्योंकि तीसरे दर्जेके डिब्बेमें सफर कर रहे हैं। आप विद्वान् भी नहीं लगते; क्योंकि आपकी भाषा साधारण है। आप नेता भी नहीं लगते; क्योंकि आपका

अनजाने कर्मका फल

एक राजा ब्राह्मणोंको एक ओर महलके आँगनमें भोजन करा रहा था। राजाका रसोइया खुले आँगनमें भोजन पका रहा था। उसी समय एक चील अपने पंजेमें एक जिंदा साँपको लेकर राजाके महलके ऊपरसे गुजरी। पंजोंमें दबे साँपने अपनी आत्मरक्षामें चीलसे बचनेके लिये अपने फनसे जहर निकाला। रसोइया जो भोजन ब्राह्मणोंके लिये पका रहा था, उस भोजनमें साँपके मुखसे निकली जहरकी कुछ बूँदें गिर गयीं। किसीको कुछ पता नहीं चला। फलस्वरूप वे सारे ब्राह्मण जो भोजन करने आये थे, उन सबकी जहरीला भोजन करते ही मौत हो गयी। अब जब राजाको सारे ब्राह्मणोंकी मृत्युका पता चला, तो ब्रह्महत्या होनेसे उसे बहुत दुःख हुआ।

ऐसेमें अब ऊपर बैठे यमराजके लिये भी यह फैसला लेना मुश्किल हो गया कि इस पाप-कर्मका फल किसके खातेमें जायगा?

१. राजा—जिसको पता ही नहीं था कि खाना जहरीला हो गया है।

२. रसोइया—जिसको पता ही नहीं था कि खाना बनाते समय वह जहरीला हो गया है।

३. चील—जो जहरीला साँप लिये राजाके महलके ऊपरसे गुजरी। या

४. वह साँप—जिसने अपनी आत्मरक्षामें जहर निकाला।

बहुत दिनोंतक यह मामला यमराजकी फाइलमें अटका रहा। फिर कुछ समय बाद कुछ ब्राह्मण राजासे मिलने उस राज्यमें आये और उन्होंने किसी महिलासे महलका रास्ता पूछा। उस महिलाने महलका रास्ता तो बता दिया, पर रास्ता बतानेके साथ-साथ ब्राह्मणोंसे ये भी कह दिया कि ‘देखो भाई!’ जरा ध्यान रखना’ वह राजा आप-जैसे ब्राह्मणोंको खानेमें जहर देकर मार देता है।’

बस जैसे ही उस महिलाने ये शब्द कहे, उसी समय यमराजने फैसला ले लिया कि इन पाप ब्राह्मणोंकी

मृत्युके पापका फल इस महिलाके खातेमें जायगा और इसे उस पापका फल भुगतना होगा।

यमराजके दूतोंने पूछा—‘प्रभु ऐसा क्यों?’

जब कि उन मृत ब्राह्मणोंकी हत्यामें उस महिलाकी कोई भूमिका भी नहीं थी।



तब यमराजने कहा—दूतो! ध्यान दो, जब कोई व्यक्ति पाप करता है, तब उसे बड़ा आनन्द मिलता है। पर उन मृत ब्राह्मणोंकी हत्यासे न तो राजाको आनन्द मिला, न ही उस रसोइयेको आनन्द मिला, न ही उस साँपको आनन्द मिला और न ही उस चीलको आनन्द मिला।

पर उस पाप-कर्मकी घटनाका बुराई करनेके भावसे बखानकर उस महिलाको जरूर आनन्द मिला। इसलिये राजाके उस अनजाने पाप-कर्मका फल अब इस महिलाके खातेमें जायगा।

बस, इसी घटनाके तहत आजतक जब भी कोई व्यक्ति जब किसी दूसरेके पाप-कर्मका बखान बुरे भावसे करता है, तब उस व्यक्तिके पापोंका हिस्सा उस बुराई करनेवालेके खातेमें भी डाल दिया जाता है।

अक्सर हम सोचते हैं कि हमने जीवनमें ऐसा कोई पाप नहीं किया, फिर भी हमारे जीवनमें इतना कष्ट क्यों आया?

ये कष्ट और कहींसे नहीं, बल्कि लोगोंकी बुराई करनेके कारण उनके पाप-कर्मोंसे आया होता है, जो बुराई करते ही हमारे खातेमें ट्रांसफर हो जाता है।

भारतीय संस्कृतिकी मूलाधार—गौ

(गोरक्षपीठाधीश्वर योगी श्रीआदित्यनाथजी महाराज, मुख्यमन्त्री उत्तरप्रदेश सरकार)

गौ प्राचीन कालसे ही भारतीय धर्म और संस्कृति-सभ्यताकी मूलाधार रही है। भारतीय संस्कृतिने प्राचीन कालसे ही गोभक्ति, गोपालनको अपने जीवनका सर्वोत्कृष्ट कर्तव्य माना है। वेद-शास्त्र, स्मृतियाँ, पुराण तथा इतिहास गौकी उत्कृष्ट महिमाओंसे ओत-प्रोत हैं। स्वयं वेद गायको नमन करता है—

अघ्ये ते रूपाय नमः।

हे अवध्या गौ! तेरे स्वरूपको प्रणाम है। ऋग्वेदमें कहा गया है कि जिस स्थानपर गाय सुखपूर्वक निवास करती है, वहाँकी रजतक पवित्र हो जाती है, वह स्थान तीर्थ बन जाता है। हमारे जन्मसे मृत्युपर्यन्त सभी संस्कारोंमें पंचगव्य और पंचामृतकी अनिवार्य अपेक्षा रहती है। गोदानके बिना हमारा कोई भी धार्मिक कृत्य सम्पन्न नहीं होता। गौ अपनी उत्पत्तिके समयसे ही भारतके लिये पूजनीय रही है। उसके दर्शन, पूजन, सेवा-शुश्रूषा आदिमें आस्तिक जन पुण्य मानते हैं। व्रत, जप, उपवास सभीमें गौ और गोप्रदत्त पदार्थ परमावश्यक है। गायका दूध अमृततुल्य होता है, जो शरीर और मस्तिष्कको पुष्ट करता है। गोमूत्र गंगाजलके समान पवित्र माना जाता है और गोबरमें साक्षात् लक्ष्मीका निवास है। शास्त्रोंके अनुसार हमारे अंग-प्रत्यंग, मांस-मज्जा-चर्म और अस्थिमें स्थित पापोंका विनाश पंचगव्य (गोदुग्ध, गोदधि, गोघृत, गोमूत्र एवं गोमय)-के पानसे होता है। आयुर्वेद और आधुनिक विज्ञानके अनुसार भी शरीर-स्वास्थ्य एवं रोग-निवृत्तिके लिये गायके दूध, दही, मट्ठा, मक्खन, घृत, मूत्र, गोबर आदिका अत्यन्त उपयोग है।

गायके शरीरमें सभी देवताओंका निवास है। अतः गौ सर्वदेवमयी है। पुरातन कालसे ही भारतीय संस्कृतिमें गाय श्रद्धाका पात्र रही है। भगवान् श्रीरामने यौवनमें प्रवेश करते समय अपने जीवनका लक्ष्य

‘गोब्राह्मणहितार्थाय देशस्यास्य सुखाय च’ के पवित्र संकल्पकी पूर्तिके लिये ही उद्घोषित किया था। गायके प्रति भारतीय भावना कितनी श्रद्धा और कृतज्ञतासे ओत-प्रोत थी, यह इस श्लोकसे स्पष्ट होता है—

गावो ममाग्रतो नित्यं गावः पृष्ठत एव च।

गावो मे सर्वतश्चैव गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

पुराणोंमें पद-पदपर गौकी अनन्त महिमा गायी गयी है। भारतीय संस्कृति ही नहीं, अपितु सारे विश्वमें गौका बड़ा सम्मान था। जैसे हम गौकी पूजा करते हैं, उसी प्रकार पारसी लोग साँड़की पूजा करते हैं। मिश्रके प्राचीन सिक्कोंपर बैलोंकी मूर्ति अंकित रहती है। ईसासे कई वर्ष पूर्व बने हुए पिरामिडोंमें बैलोंकी मूर्ति अंकित है।

भारतीय संस्कृति यज्ञ-प्रधान है। वेद, रामायण, महाभारत आदि धार्मिक तथा ऐतिहासिक ग्रन्थोंमें यज्ञको ही सर्वोच्च स्थान दिया गया है। यज्ञ करनेसे पृथिवी, जल, वायु, तेज, आकाश—इन पंचभूतोंकी शुद्धि होती है। पंचभूतोंके सामंजस्यसे मानव-शरीर बना है। अतः शरीरको सुरक्षित रखनेके लिये पंचभूतोंका शुद्ध रूपोंमें उपयोग आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। यज्ञ करनेसे जो परमाणु निकलते हैं, वे बादलोंको अपनी ओर खींचते हैं, जिससे वर्षा होती है। यज्ञमें गायके सूखे गोबरका प्रयोग किया जाता है। इस सूखे गोबरसे एक प्रकारका तेज निकलता है, जिससे लाखों विषैले कीट तत्क्षण ही नष्ट हो जाते हैं। गौके सूखे गोबरको जलानेसे मक्खी-मच्छर आदि मर जाते हैं। गौके दूध, दही और घी आदिमें वे सब पौष्टिक पदार्थ वर्तमान हैं, जो अन्य किसी दुग्धादिमें नहीं पाये जाते। गोमूत्रमें कितने ही छोटे तथा बड़े रोगोंको दूर करनेकी शक्ति है, इसके यथाविधि सेवन करनेसे सभी प्रकारके उदर-रोग, नेत्ररोग, कर्णरोग आदिको मिटाया जा सकता है। कई संक्रामक रोग तो गौओंके स्पर्श की हुई

आज गौको व्यावहारिक उपयोगिताकी दृष्टिसे भौतिक तुलापर तौला जा रहा है। हमें याद रखना चाहिये कि आजका भौतिक विज्ञान गौकी इस सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमोत्कृष्ट उपयोगिताका पता ही नहीं लगा सकता, जिसे भारतीय शास्त्रकारोंने अपनी दिव्य दृष्टिसे प्रत्यक्ष कर लिया था। गौकी धार्मिक महानता उसमें जिन सूक्ष्मातिसूक्ष्म-रूप तत्त्वोंकी प्रखरताके कारण है, उनकी खोज तथा जानकारीके लिये आधुनिक वैज्ञानिकोंके भौतिक यन्त्र सदैव स्थूल ही रहेंगे। यही कारण है कि इक्कीसवीं सदीकी ओर अग्रसर विज्ञानवेत्ता भी गोमाताके लोम-लोममें देवताओंके निवास-रहस्य और प्रातः गोदर्शन, गोपूजन, गोसेवा आदिका वास्तविक तथ्य समझनेमें असफल रहा है। गौका धार्मिक महत्त्व भाव-जगत्से सम्बन्ध रखता है और वह शास्त्र-प्रमाणद्वारा शुद्ध भारतीय संस्कृतिके दृष्टिकोणसे ही जाना जा सकता है। इन सब विशेषताओंके कारण गौको भारतीय संस्कृतिका मूलाधार कहा गया है। [गोसेवा-अंक]

- ❖ प्रतिदिन हरी-ताजी घास पेटभर खिलाना।
- ❖ दूध दुहकर उसीको पिला देना।
- ❖ गुड़ एक भाग और जौ तीन भाग एक साथ पकाकर प्रतिदिन खिलाना।
- ❖ गोभी और पत्तागोभीकी पत्तियाँ खिलाना।
- ❖ पपीतेके कच्चे फल और पपीतेकी पत्तियाँ पीसकर गुड़ मिलाकर खिलाना।
- ❖ सनके फूल, महुआके फूल, घास और गुड़ जलमें उबालकर खिलाना।
- ❖ तीसीकी खल और उबाला हुआ मटर खिलाना।
- ❖ किसारीकी दालके साथ गेहूँ उबालकर खिलाना।
- ❖ गुँवार खूब पकाकर या रातभर जलमें भिँगोकर खिलाना।
- ❖ गुड़ और काँजी मिलाकर खिलाना।
- ❖ घी, मैदा और गुड़ मिलाकर पकाकर खिलाना। इससे खूब दूध बढ़ता है।
- ❖ बीजवाले केलेको चावलके साथ उबालकर खिलाना।
- ❖ पलास और सेमलके फल खिलाना।

धनोपार्जनका उचित और अनुचित रूप

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

मनुष्य धन क्यों चाहता है? जिन वस्तुओंकी उसे जरूरत है, वे धनसे मिलती हैं। वस्तुओंकी उसे जरूरत क्यों है? भोग-इच्छाकी पूर्तिके लिये। इच्छाकी पूर्ति क्यों चाहता है? उसकी पूर्तिमें सुख प्रतीत होता है। वस्तुओंके संयोगमें सुख मालूम होता है, यही काम है एवं काम ही लोभ है। अतः यह सिद्ध हुआ कि लोभके कारण ही मनुष्यको धनकी जरूरत होती है। लोभ न रहे तो धनकी जरूरत नहीं रहती।

मनुष्यकी आगे बढ़नेकी, ऊपर उठनेकी रुचि स्वाभाविक है, जो वस्तु या परिस्थिति उसे प्राप्त है, उससे वह अच्छी चाहता है। जैसा मकान प्राप्त है, उससे अच्छा चाहता है। वैसा मिल जाय तो उससे अच्छा चाहता है। जितना धन प्राप्त है, उससे ज्यादा धन चाहता है, जो वस्तु प्राप्त है, उससे अच्छी और नाना प्रकारकी वस्तुएँ चाहता है, जितना सम्मान प्राप्त है, उससे अधिक चाहता है। जितनी भोगसामग्री प्राप्त है, उससे अधिक चाहता है। इस प्रकार कभी भी उसकी चाहका अन्त नहीं होता। आगे-से-आगे अभाव बना रहता है और अभावके रहते कभी सुख नहीं मिल सकता।

जब किसी कारणसे नुकसान हो जाता है, प्राप्त वस्तु और धन चला जाता है, तब चाहता है कि किसी तरह खर्च चलता रहे, अधिक नहीं, तो पहलेवाली परिस्थिति ही प्राप्त हो जाय, तो मैं सुखी हो जाऊँगा। फिर यदि वह परिस्थिति प्राप्त हो जाती है, तो उससे अधिक चाहने लग जाता है। इस प्रकार मनुष्य नाना

प्रकारकी इच्छाओंके जालमें फँसा रहता है। वास्तवमें वस्तुओंकी प्राप्ति उसके सुख-दुःखका कारण नहीं है। चाहकी पूर्ति सुख और नयी चाहका होना ही दुःख है एवं चाहकी निवृत्ति ही सुख-दुःखसे परेकी स्थिति है और यही चित्तकी शुद्धि है। मनुष्यको जो सुख किसीके दुःखसे मिलता है, वह ठीक नहीं है, क्योंकि जिसका जन्म किसीके दुःखसे होता है, उसका फल भी दुःख ही होगा। आमके बीजका फल भी आम ही होगा और बबूलके बीजका फल काँटा होगा।

व्यापारके दो रूप होते हैं—एक तो वह सट्टेका व्यापार है, जिसमें जूएकी भाँति किसी एकका नुकसान ही दूसरेका लाभ होता है। इस बातको सभी जानते हैं कि सट्टेमें धन बाहरसे नहीं आता। सट्टा करनेवालोंमें ही एकका नुकसान और दूसरेका लाभ होता है। सट्टा करनेवाले सभी लाभकी आशासे करते हैं, परंतु सबको लाभ नहीं हो सकता। इस व्यापारमें किसीका दुःख ही दूसरेका सुख है, अतः यह व्यापार उचित नहीं है। दूसरा व्यापार वह है, जिसमें समाजकी आवश्यकता पूरी करनेके लिये वस्तुओंका उत्पादन किया जाता है, जहाँ वस्तुएँ अधिक होती हैं, वहाँसे उस जगह पहुँचायी जाती हैं, जहाँ उसकी आवश्यकता होती है। इस प्रकार जो व्यापार समाजकी आवश्यकता पूरी करनेके लिये किया जाता है, उसमें किसीका नुकसान नहीं होता। श्रम करनेवालेसे लेकर भोक्तातक सभीको सुख मिलता है और व्यापारीको भी उसके परिश्रमके बदलेमें धन मिल जाता है। यह व्यापार ठीक है।

सच्चा सेवक बननेका उपाय

आप अगर सच्चे सेवक होना चाहते हैं और सबसे बड़े सेवक होना चाहते हैं तो आपको ये तीनों बातें अपने ही द्वारा अपनेमें स्वीकार करनी पड़ेंगी—

- १-आजसे मैं किसीको बुरा नहीं समझूँगा।
- २-आजसे मैं किसीका बुरा नहीं चाहूँगा।
- ३-आजसे मैं किसीके साथ बुराई नहीं करूँगा।

महानुभाव! मैं नहीं कहता कि आप किसीका भला करें, मैं नहीं कहता कि आप किसीके साथ भलाई करें। यह क्या कम है कि हम किसीको बुरा न समझें। हम किसीका बुरा न चाहें। हम किसीके साथ बुराई न करें। यह कोई कम नहीं है। [सत्संग : सन्तोंके संग]

पढ़ो, समझो और करो

(१)

आतिथ्यकी महान् भारतीय परम्परा

एक भारतीय प्राध्यापक अनेक वर्षोंतक इंग्लैण्डके ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयमें शिक्षा एवं शोधके पश्चात् जब भारत लौटा तो विश्वविद्यालयमें प्राध्यापक नियुक्त हुआ। वह प्रायः प्रतिदिन नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्तामें एक अन्य युवा प्राध्यापकको शोधमें मार्गदर्शनहेतु ले जाता था। संध्या समय लौटती बारमें वे दोनों फिदरपुर मार्केटमें एक साधारण होटलमें चाय, जलपान करते। ऑक्सफोर्डका पढ़ा हुआ प्राध्यापक प्रतिदिन भारतके सामान्य चाय होटलकी इंग्लैण्डके बड़े वैभवशाली होटलोंसे तुलनाकर भारतकी निन्दा करता रहता था। वहाँके होटल महल-जैसे थे और भारतमें खपरासे ढके हुए साधारण झोंपड़ेंमें होटल चलता। वहाँ कालीन बिछे रहते, यहाँ कीचड़ और धूलसे भरा हुआ मिट्टीका फर्श, वहाँ सुन्दर सूट-बूट पहने बेरे साफ-सुथरी मेजोंपर भोजन पहुँचाते, यहाँ अधनंगे-अनपढ़ बच्चे गन्दी-सी टेबलोंपर मैले हाथोंसे मैले बरतनोंमें खाना पहुँचाते थे। वहाँ सुगन्धित वातावरण, यहाँ मक्खी-मच्छरकी भरमार, वहाँ बैण्ड-बाजा और नर्तकियाँ, यहाँ अजीब शोरगुल और नौकरोंकी चिल्लाहट, वहाँका मैनेजर या मालिक रईसके समान, यहाँका होटल-मालिक पसीनेसे लथपथ एक गंजी एवं धोती पहने हुए ग्राहकोंसे पैसा लेनेमें और नौकरोंको डाँटनेमें लगा हुआ। इंग्लैण्डकी चकाचौंधके बाद विदेशसे आये हुए उस भारतीयको भारतमें कुछ भी अच्छा दिखायी नहीं देता। वह रोज कहता—This dirty India. I hate India. एक दिन नेशनल लाइब्रेरीमें बहुत विलम्बतक पुस्तकोंका अध्ययनकर जब दोनों प्राध्यापक लौटे तो देखा कि बाजार बन्द हो गया है। कोई खानेकी दुकान भी खुली नहीं मिली। अन्तमें उसी होटलके पास पहुँचे जहाँ प्रतिदिनका चाय-पान करते थे। होटलका द्वार ढका हुआ था। मालिकने कहा—‘होटल बन्द हो चुका है।’ ऑक्सफोर्डवाले प्रोफेसरने झाँककर देखा तो भीतर अन्दरके चूल्हेमें रोटियाँ बन रही

थीं। उसने रोटियोंकी ओर संकेत करते हुए कहा—‘रोटियाँ तो बन रही हैं।’ मालिक उन्हें भीतर ले गया और आदरपूर्वक स्वयं दो थालीमें भोजन परोसकर लाया। उन्हें उस दिन भोजनसे बड़ी तृप्ति हुई। वे विस्मयमें थे कि जो मालिक स्वयं गद्दीपर बैठे हुए नौकरोंसे काम कराता था, वह आज स्वयं अपने हाथसे इतनी सेवा क्यों कर रहा है! भोजनके उपरान्त जब ऑक्सफोर्डवाले प्रोफेसरने पूछा कि बिल कितना हुआ तो मालिकने हाथ जोड़कर कहा, ‘हमें लज्जित मत करो। हमारा होटल बन्द हो चुका है। यह भोजन आपको अतिथिके रूपमें कराया है। पैसेका नाम लेकर हमारे अतिथि-धर्मको कलंकित मत कीजिये।’ प्रोफेसरने बहुत कहा कि ‘दुकान यही है। यहींपर हम दोनों जलपान लेते हैं।’ पर मालिकने कहा कि दुकानकी अपनी मर्यादा है। दुकान बन्द हो चुकी है। यह भोजन दुकानके लिये नहीं, हमारे निजी प्रयोगके लिये बन रहा था। इसका पैसा लेनेपर हमारा धर्म नष्ट हो जायगा। इस दृश्यसे उस प्रोफेसरकी आँखें श्रद्धासे गीली हो गयीं। और उसने कहा This is wonderful India. इंग्लैण्डमें होटलमें भोजन करनेपर सगे भाईसे भी चार्ज किया जाता है, किंतु भारतमें नितान्त अपरिचित व्यक्तिको निष्काम भावसे भोजन कराना अतिथि-धर्म माना जाता है। उस दिन उसे समझ आया कि भारतकी निर्धनताके फटे चिथड़ोंके नीचे भी भारतकी दिव्य आत्मा छिपी हुई है।—डॉ० हरवंशलाल ओबराय

(२)

पैसा एक साधन है, समाधान नहीं

मुझे कई सेवा-संस्थाओंमें काम करनेका अवसर मिला, जैसे—अस्पताल, संस्कृत महाविद्यालय, कॉलेज, गौशाला, व्यायामशाला आदि। मुझे संस्थाएँ जो मिलीं, वे बीमार हालातमें और आर्थिक दृष्टिसे बुरी तरह कमजोर थीं। एक संस्था तो भारतके बहुत बड़े औद्योगिक घरानेसे सम्बन्धित थी, जिनके पास पैसेकी कोई कमी नहीं थी, लेकिन वह भी बीमार चल रही थी। कारण सही कार्यकर्ताका अभाव था। आजकल समाजमें भी जो पैसा दान दे उसकी

जीवनजी डूडी राजस्थानके नागौरके कलवा गाँवमें रहनेवाले एक कट्टर कृष्णभक्त थे। २० जनवरी सन् १६१५ई० में, उन्हें एक कन्यारत्नकी प्राप्ति हुई, जिसका नाम उन्होंने

मनन करने योग्य

किसीका अपमान न करें

कुसुमपुरमें नन्द नामका एक राजा था। उसके मन्त्रीका नाम था शकटार। किसी कारणवश मन्त्री और राजामें विरोध हो गया। फलस्वरूप राजाने मन्त्री शकटारकी सभी सम्पत्तियोंको जब्त करके समस्त परिवारजनोंके साथ उसे कारागारमें बन्द करवा दिया। राजाकी ओरसे शकटारसहित समस्त परिवारको आहारके रूपमें आधा पाव सत्तू मिलता था, जो कि एक व्यक्तिकी क्षुधाको शान्त करनेयोग्य भी नहीं था। परिवारके सभी सदस्योंने विचार किया कि राजासे बदला लेनेके लिये शकटारकी प्राण-रक्षा आवश्यक है, अतः इस आहार (सत्तू)-को लेकर शकटार जीवित रहें एवं राजा नन्दका प्रतीकार करें। कालान्तरमें शकटारके परिवारके सभी सदस्य अन्न-जलके अभावमें कालकवलित हो गये, किंतु शकटार बदला लेनेकी प्रतीक्षामें जीवित बना रहा। मन्त्री तो वह राजाका था ही। अतः कभी-कभी राजाकी अनेक समस्याओंको वह अपने बुद्धिचातुर्यसे परोक्षरूपमें सुलझा दिया करता था। राजाको जब यह ज्ञात हुआ कि शकटार अभी जीवित है एवं उसने ही इन समस्याओंका समाधान किया है, तो प्रसन्न होकर राजा नन्दने शकटारको बन्धनमुक्तकर अपने प्रधान अमात्य राक्षसके सहायकके रूपमें नियुक्त कर दिया।

शकटार दुर्लभ पद पाकर प्रसन्न हुआ, उसने सोचा—मेरे परिवारके सभी सदस्योंने राजा नन्दसे बदला लेनेके निमित्त अपना-अपना आहार त्यागकर मेरे प्राण बचाये। अब अवसर पाकर बदला नहीं लेनेसे समाजमें अपयश तो होगा ही, साथ ही मैं कायर भी कहलाऊँगा।

इस प्रकार विचार करता हुआ शकटार नगरके बाहर भ्रमण करने चला गया। उसने भ्रमण करते हुए देखा कि एक ब्राह्मण-बालक कुशाको उखाड़कर उसकी जड़में तक्र डाल रहा है। यह देखकर मन्त्री शकटारने पूछा—‘ब्राह्मण! तुम कौन हो और यहाँ क्या कर रहे हो?’ उसने उत्तर दिया—‘मैं चाणक्यशर्मा नामका ब्राह्मण हूँ। अंगोंरहित होनेका अश्रावण करने

विवाहार्थ इधरसे जाते हुए मेरे पाँवमें यह कुशांकुर चुभ गया। इस घावके फलस्वरूप मेरा विवाह बाधित हुआ। मैंने क्रोधित होकर प्रतिज्ञा की है कि इस स्थलके कुशोंको ही निर्मूल कर दूँगा। मैंने आयुर्वेदशास्त्रमें ऐसा पढ़ा है कि कुशकी जड़में तक्र डालनेसे कुशका नाश हो जाता है, इसपर शकटारने पूछा—‘यदि तुम वृक्षायुर्वेद नहीं जानते तो इसके विनाशका क्या उपाय करते?’

चाणक्यने उत्तर दिया कि ‘अभिचार-कर्मके द्वारा कुशके विनाशकी कामनासे हवन करता।’

शकटार उस ब्राह्मण बालकके प्रतिशोधकी भावना एवं उपायोंको जानकर चकित हो गया। वह सोचने लगा कि यदि यह ब्राह्मण किसी उपायसे मेरे शत्रु अर्थात् राजा नन्दका भी शत्रु हो जाय तो मुझे वैरभावका बदला लेनेमें कोई कठिनाई नहीं होगी। यह विचारकर शकटार उस ब्राह्मणके अनुकूल बातें करता हुआ उसे अपने घर ले आया और राजपुरोहितसे मिलकर बड़ी ही युक्तिसे उसने राजा नन्दके पिताके क्षयाहश्राद्धमें ब्राह्मण-भोजनके रूपमें चाणक्यको निमन्त्रित करवाया। शकटारने सोचा कि अविवाहित, कपिशवर्ण, काले-काले नख तथा दाँतवाले एवं मेरे द्वारा निमन्त्रित इस ब्राह्मणको देखकर मेरा विरोधी मन्त्री राक्षस इसको श्राद्ध-भोजनके अयोग्य समझकर अपमानित करेगा और हुआ वही। राजा नन्द श्राद्धके आसनपर पहुँचा तो वहाँ आसनपर वैसे बालकको देखकर मन्त्री राक्षस बोला—‘यह ब्राह्मण श्राद्ध-कर्मके योग्य नहीं है’, तदनन्तर राक्षसकी मन्त्रणासे राजाने चाणक्यको अपमानितकर बाहर निकाल दिया। अपमानित ब्राह्मण चाणक्यने क्रुद्ध होकर प्रतिज्ञा की कि जबतक राजा नन्दका वध (नाश) नहीं करवा दूँगा, तबतक अपनी इस मुक्त शिखाको नहीं बाँधूँगा।’

चाणक्यकी इस प्रतिज्ञाको सुनकर मन्त्री शकटार कृतकृत्य हो गया और राजा नन्दसे अपने परिवारके

गीताप्रेससे प्रकाशित महापुराण—अब उपलब्ध

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
2223 2224	श्रीशिवमहापुराण (दो खण्डोंमें) सटीक	740	1362	श्रीअग्निपुराण—सम्पूर्ण (श्लोकाङ्कसहित) केवल हिन्दी	300
1897 1898	श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण [मतान्तरसे] (दो खण्डोंमें) ”	600	44	संक्षिप्त पद्मपुराण ”	370
26,27	श्रीमद्भागवतमहापुराण (दो खण्डोंमें) ”	760	1183	संक्षिप्त श्रीनारदपुराण ”	300
557	श्रीमत्स्यमहापुराण ”	380	279	संक्षिप्त श्रीस्कन्दपुराण ”	480
48	श्रीविष्णुपुराण ”	200	1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण ”	160
1432	श्रीवामनपुराण ”	180	539	संक्षिप्त श्रीमार्कण्डेयपुराण ”	120
1131	श्रीकूर्मपुराण ”	200	1189	संक्षिप्त श्रीगरुडपुराण ”	230
1985	श्रीलिङ्गमहापुराण ”	300	1361	संक्षिप्त श्रीवराहपुराण ”	150
1113	नरसिंहपुराण—	120	631	संक्षिप्त श्रीब्रह्मवैवर्तपुराण ”	280

सहस्रनामस्तोत्रसंग्रह (कोड 1594)

प्रस्तुत पुस्तकमें एक साथ श्रीगणपति, श्रीविष्णु, श्रीशिव, श्रीदुर्गा, श्रीसूर्य, श्रीराम, श्रीकृष्ण, श्रीलक्ष्मी-नृसिंह, श्रीगोपाल, श्रीराधाकृष्ण, श्रीहनुमान्, श्रीगायत्री, श्रीगङ्गा, श्रीयमुना, श्रीलक्ष्मी, श्रीअन्नपूर्णा, श्रीसीता, श्रीराधिका, श्रीललिता, श्रीभवानी, श्रीदत्तात्रेय, श्रीवक्रतुण्ड-महागणपति—22 देवी-देवताओंके सहस्रनामावलीसहित सहस्रनामस्तोत्र प्रकाशित किये गये हैं। परमात्मप्रभुकी प्रसन्नताके निमित्त पूजा-अर्चनाके लिये यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। मूल्य ₹150

सहस्रनामस्तोत्र (नामावलीसहित) अलगसे पॉकेट साइजमें भी

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
1599	श्रीशिवसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1664	श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1706	श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्	10
1600	श्रीगणेशसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1665	श्रीसूर्यसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1707	श्रीलक्ष्मीसहस्रनामस्तोत्रम्	10
1601	श्रीहनुमत्सहस्रनामस्तोत्रम्	10	1704	श्रीसीतासहस्रनामस्तोत्रम्	10	1708	श्रीराधिकासहस्रनामस्तोत्रम्	12
1663	श्रीगायत्रीसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1705	श्रीरामसहस्रनामस्तोत्रम्	10	1709	श्रीगङ्गासहस्रनामस्तोत्रम्	10

शतनामस्तोत्रसंग्रह (कोड 1850) पुस्तकाकार—प्रस्तुत पुस्तकमें गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, दुर्गा आदि विभिन्न देवों और देवियोंके शतनामस्तोत्रों एवं शतनामावलियोंको प्रकाशित किया गया है। भक्तगण इसके माध्यमसे उपासना एवं पूजा करके यथोचित लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ₹35

नवरात्रके अवसरपर नित्य पाठके लिये ‘श्रीरामचरितमानस’ के विभिन्न संस्करण

कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹
2295	चित्रमय श्रीरामचरितमानस-सटीक—ग्रन्थाकार	1600	2166	श्रीरामचरितमानस-सटीक, ग्रन्थाकार (साधारण संस्करण)	230
1389	श्रीरामचरितमानस—बृहदाकार (वि०सं०)	800	1563	” मझला, सटीक (विशिष्ट संस्करण)	170
80	” बृहदाकार-सटीक (सामान्य संस्करण)	700	1436	” मूलपाठ, बृहदाकार	400
1095	” ग्रन्थाकार-सटीक (वि०सं०) गुजरातीमें भी	450	82	” मझला साइज, सटीक, [बँगला, गुजराती, अंग्रेजी भी]	150
81	” ग्रन्थाकार-सटीक, सचित्र, मोटा टाइप, [ओड़िआ, तेलुगु, मराठी, असमिया, नेपाली, गुजराती, कन्नड, अंग्रेजीमें भी]	400	83	” मूलपाठ, ग्रन्थाकार [गुजराती, ओड़िआ भी]	170
1402	” सटीक, ग्रन्थाकार (सामान्य संस्करण)	280	84	” मूल, मझला साइज [गुजराती भी]	100
			85	” मूल, गुटका [गुजरातीमें भी]	60
			1544	” मूल गुटका (विशिष्ट संस्करण)	70



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE No. WPP/GR-03/2020-2022

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—श्रीदुर्गासप्तशतीके विभिन्न संस्करण (शारदीय नवरात्र 26 सितम्बर सोमवारसे प्रारम्भ होगा)

कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹
1567	मूल, मोटा टाइप, बेड़िआ (मलयालममें भी)	50
876	मूल, गुटका	25
1346	सानुवाद, मोटा टाइप	40
1281	सानुवाद (वि० सं०)	70
118	सानुवाद, सामान्य टाइप (गुजराती, बँगला, ओड़िआ, तेलुगु, नेपालीमें भी)	40
489	सानुवाद, सजिल्द (गुजरातीमें भी)	60
866	केवल हिन्दी	30
1161	" " मोटा टाइप, सजिल्द	70

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—शक्ति-उपासकोंके लिये कुछ विशिष्ट प्रकाशन

‘श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण’—[सचित्र, मूल श्लोक, हिन्दी-व्याख्यासहित] (कोड 1897-1898)
दो खण्डोंमें—इस महापुराणको (मूल श्लोक भाषा-टीकासहित) दो खण्डोंमें प्रकाशित किया गया है। इसके प्रथम खण्डमें 1 से 6 स्कन्ध एवं द्वितीय खण्डमें 7 से 12 स्कन्धकी कथाएँ दी गयी हैं। दोनों खण्डोंका मूल्य ₹600, संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत [मोटा टाइप] (कोड 1133) ग्रन्थाकार—मूल्य ₹350, गुजराती, कन्नड़, तेलुगु भी उपलब्ध।

महाभागवत [देवीपुराण] (कोड 1610) हिन्दी-अनुवादसहित—इस पुराणमें मुख्यरूपसे भगवतीके माहात्म्य एवं लीला-चरित्रका वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसमें मूल प्रकृतिके गंगा, पार्वती, सावित्री, लक्ष्मी, सरस्वती और तुलसीरूपमें की गयी विचित्र लीलाओंके रोचक आख्यान हैं। मूल्य ₹170

देवीस्तोत्ररत्नाकर (कोड 1774) पुस्तकाकार—इस पुस्तकमें भगवती महाशक्तिके उपासकोंके लिये देवीके अनेक स्वरूपोंके उपासनार्थ चुने हुए विभिन्न स्तोत्रोंका अनुपम संकलन किया गया है। मूल्य ₹45

शक्तिपीठदर्शन (कोड 2003)—प्रस्तुत पुस्तकमें भगवतीके 51 शक्तिपीठोंके इतिहास और रहस्यका विस्तृत वर्णन है। मूल्य ₹25

शक्ति-अङ्क (कोड 41) [सचित्र, सजिल्द] ग्रन्थाकार—इसमें परब्रह्म परमात्माके आद्याशक्ति-स्वरूपका तात्त्विक विवेचन, महादेवीकी लीला-कथाएँ एवं सुप्रसिद्ध शाक्त भक्तों और साधकोंके प्रेरणादायी जीवन-चरित्र तथा उनकी उपासनापद्धतिपर उत्कृष्ट उपयोगी सामग्री संगृहीत है। मूल्य ₹250

booksales@gitapress.org थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें।

gitapress.org सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।

कूरियर/डाकसे मँगवानेके लिये गीताप्रेस, गोरखपुर—273005

book.gitapress.org / gitapressbookshop.in

If not delivered; please return to Gita Press, Gorakhpur—273005 (U.P.)